शैक्षिक मंथन

(द्विभाषी मासिक)

शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

वर्ष : 9 अंक : 9 1 अप्रेल, 2017

(चैत्र-वैशाख, विक्रम संवत् 2074)

संरक्षक
मुकुन्द कुलकर्णी ❑ के.नरहरि

❖

परामर्श
डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल
जगदीश प्रसाद सिंघल

❖

सम्पादक
सन्तोष पाण्डेय

❖

सह सम्पादक
विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी ❑ भरत शर्मा

❖

संपादक मंडल
प्रो. नन्दकिशोर पाण्डेय
डॉ. नाथू लाल सुमन
डॉ. एस.पी. सिंह
डॉ. ओमप्रकाश पारीक

❖

प्रबन्ध सम्पादक
महेन्द्र कपूर

❖

व्यवस्थापक
बजरंग प्रसाद मजेजी

प्रेषण प्रभारी
बसन्त जिन्दल ❑ नौरंग सहाय भारतीय
कार्यालय प्रभारी
आलोक चतुर्वेदी : 9782873467

प्रकाशकीय कार्यालय
82, पटेल कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,
जयपुर (राज.) 302001
दूरभाष : 9414040403

दिल्ली ब्यूरो :
शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13,
कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली-110053
दूरभाष : 011-22914799

E-mail :
shaikshikmanthan@gmail.com
Visit us at :
www.shaikshikmanthan.com

एक प्रति 20/– वार्षिक शुल्क 200/–
आजीवन (दस वर्ष) 1500/-

पृष्ठ संयोजन : सागर कम्प्यूटर, जयपुर

शैक्षिक मंथन मासिक में प्रकाशित सामग्री से संपादक मण्डल का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

अधिगम स्तर : वर्तमान परिदृश्य व चुनौतियाँ ❑ डॉ. इन्दुबाला अग्रवाल

भारत को स्वतंत्र हुए 70 वर्ष पूरे हो रहे हैं। हम अब भी न्यूनतम अधिगम पर अटके हैं। आवश्यकता है कि विशिष्ट कौशलों के विकास की जो बालक को जीवन में स्वावलम्बन व रोजगार दे सकें। जो परिवारों को भविष्य की अनिश्चितताओं की चिंता से मुक्त कर सकें। ऐसे स्त्रोतों का विकास गाँव-गाँव, चौपाल-चौपाल और घर-घर हो, ताकि ना केवल बालक वरन् प्रौढ भी स्वतः शिक्षा प्राप्त कर सकें, व बच्चों को कर्मठ बनने की प्रेरणा मिले जिससे शिक्षा की अलख घर-घर जगा पाए। शिक्षा के प्रति आस्था उत्पन्न हो।

7

अनुक्रम

4. न्यूनतम अधिगम स्तर व शिक्षा की गुणवत्ता – सन्तोष पाण्डेय
9. बढ़ता बोझ, घटता अधिगम – विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी
11. शिक्षण की प्राथमिकता-अधिगम – डॉ. रेखा भट्ट
13. कैसे बढ़े शिक्षा की गुणवत्ता – बजरंगी सिंह
15. शिक्षा की दशा व दिशा – श्रीमती ममता मंजुनाथ
19. प्रतिभा नवोन्मेष की आधारशिला-अधिगम – प्रो. मधुर मोहन रंगा
22. शिक्षा : परिसर का परिवेश – एम.जे. वारसी
24. नींव ही कमजोर है – अश्विनी कुमार
26. M.L.L. and Some Thoughts – Dr. TS Girishkumar
28. कुछ नया सोचें नई सरकारें – जगमोहन सिंह राजपूत
30. देश सर्वोपरि - बाबा साहेब – बजरंग प्रसाद मजेजी
32. हिन्दुत्व और सामाजिक समरसता – डॉ. ओम प्रभात अग्रवाल
35. Gandhi Can Never Die
36. शैक्षिक समाचार
39. गतिविधि

Need of Attainment of Minimum Levels of Learning

❑ Dr. Prakash Chandra Agarwal

Concept of MLL is not new. The NPE 1986, revised in 1992 and POA 1992 emphasise that the minimum levels of learning should be laid down and children's learning should periodically be assessed to keep a track of their progress towards ensuring the achievement of NPE goal that all children should acquire at least MLLs. MLLs were developed class-wise and subject-wise for primary stage in 1992 in the form of competencies to put into practice the NPE formulations. However later on it was realised that development of class-wise competencies made this exercise more product and rubric-oriented rather than facilitating overall development of children and improving the quality of learning.

16

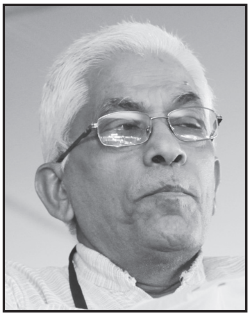

एक अच्छी शिक्षा व्यवस्था के लिये आवश्यक है कि वह व्यक्ति के ज्ञान के उच्चतम स्तर तक ले जाये व समाज के सामाजिक उद्देश्यों से युक्त योग्य नागरिकों का सृजन करें। श्रेष्ठता के उच्चतम स्तर पर पहुँचने के लिये सभी समान अवसर उपलब्ध हों। शिक्षा ग्रहण करने वाला व्यक्ति ज्ञान के सर्वोच्च शिखर तक पहुँचे, आत्मनिर्भर, स्वावलंबी व समाज व राष्ट्रीय गौरव का प्रतीक बने। तथ्यों, घटनाओं व समस्याओं युक्तिपूर्ण विश्लेषण व समीक्षा कर उपयुक्त व न्यायोचित निष्कर्ष निकालने में समर्थ हो, तब ही शिक्षा को गुणवत्तापूर्ण कहा जा सकता है, व शिक्षा की उपलब्धि शलाघनीय हो सकती है। इन सभी मानकों को पूर्ण करने में भारतीय शिक्षा व्यवस्था समर्थ नहीं है। शिक्षा की गुणवत्ता उस स्तर तक पहुँच चुकी है, जहाँ श्रेष्ठता व श्रेष्ठ उपलब्धि के स्थान पर सीखने के न्यूनतम स्तर की बात करनी पड़ रही है।

न्यूनतम अधिगम स्तर व शिक्षा की गुणवत्ता

❑ सन्तोष पाण्डेय

संपादकीय

प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक तथा शोध व अनुसंधान की सुविधाओं के संख्यात्मक व भौगोलिक विस्तार के साथ-साथ शिक्षा की गुणवत्ता किसी भी देश के विकास व निवासियों के जीवन स्तर तथा खुशहाली के स्तर को निर्धारित करती है। शिक्षा का विस्तार व गुणवत्ता का उच्च स्तर ही किसी देश की संपन्नता, स्वावलंबन, आत्मसम्मान व राष्ट्रीय गौरव का परिचायक होता है। इस दृष्टि से भारतीय शिक्षा व्यवस्था का विषद परीक्षण अपेक्षित है। स्वतंत्रता प्राप्ति तक भारत में शिक्षा सुविधाओं का व्यापक विस्तार तो नहीं था, परन्तु गुणात्मक दृष्टि से शिक्षा का स्तर पर्याप्त रूप से संतोषजनक था। आज स्वतंत्रता के सात दशकों के बाद परिदृश्य एकदम बदला हुआ है। मानव संसाधनों के समुचित विकास एवं उपयोग के लिये शिक्षा के प्रचार व प्रसार के व्यापक कार्यक्रमों का परिणाम रहा कि देश में शिक्षण संस्थाओं, शोध व अनुसंधान संस्थानों का जाल फैलने लगा। समय-समय पर गठित शिक्षा आयोगों, समितियों, शिक्षाविदों की अनुशंसाओं के आधार पर नये-नये प्रयोग किये गये। राष्ट्रीय शिक्षा नीति बनाई गई। बीसवीं शताब्दी के अन्तिम दशक में उदारीकरण के चलते तथा सरकार द्वारा शैक्षिक विस्तार व गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने में संसाधनों की कमी ने सरकार को प्रेरित किया कि वह शिक्षा के क्षेत्र को निजी उद्यम के लिये खोले। शिक्षा को मौलिक अधिकार बनाने व शिक्षा के अधिकार के अधिनियम के लागू होने के पश्चात् देश में शिक्षा का चेहरा व चरित्र बदला है। प्राथमिक से उच्च शिक्षा तक सभी को शिक्षा प्रदान करने की दिशा में देश ने पर्याप्त प्रगति की है। गाँव-गाँव तक प्राथमिक शिक्षा पहुँची है। सभी को प्राथमिक शिक्षा सुलभ कराने में देश सफल हुआ, यह बड़ी उपलब्धि है। स्कूलों में नामांकन स्थिति लगभग पूर्णता की ओर है। माध्यमिक व उच्च शिक्षा के अवसर लगभग सभी बड़े स्थानों तक सुलभ हो सके हैं। उच्च माध्यमिक विद्यालयों की संख्या बढ़ी है। निजी उद्यम के प्रदेश ने शिक्षा के संख्यात्मक विस्तार को गति प्रदान की है। निजी उद्यम के प्रवेश ने शिक्षा के विस्तार को बहुआयामी बनाया है। आज सभी प्रकार के ज्ञान की शाखाओं और विद्याओं के शिक्षण प्रशिक्षण की सुविधा देश में विद्यमान है।

शिक्षा के क्षेत्र की सभी सफलतायें किसी भी देश के लिये गर्व का विषय बन सकती है। परन्तु गर्व की इस अनुभूति में भी भारतवासी एक कसक अनुभव करते हैं। कसक यह है कि शिक्षा के व्यापक प्रसार में शिक्षा की गुणवत्ता कहीं खो गई है, शिक्षा के उद्देश्य अदृश्य हो गये हैं। परिणाम है कि न तो वर्तमान सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था सभी शिक्षार्थियों की अन्तर्निहित क्षमताओं व संभावनाओं के प्रकटीकरण में योग दे पा रही है और न ही समाज की उत्पादन व्यवस्था को सुचारू चलाये रखने हेतु योग्य व्यक्तियों का निर्माण कर पा रही है? विशाल जनसंख्या वाले देश में व्यक्तिगत योग्यताओं व सफलताओं के उच्च शिखर पर पहुँचने वालों की संख्या भी उल्लेखनीय हो सकती है। परन्तु शिक्षा तो संतोषजनक तब ही कही जायेगी जब प्रत्येक शिक्षार्थी में शिक्षा के उद्देश्यों को समाविष्ट किया जाय, उसकी प्रतिभा को पल्लवित होने का अवसर व मार्ग मिले तथा वह स्वयं जीवनयापन के साधन जुटाने में समर्थ हो सके। वह देश की सांस्कृतिक विरासत व राष्ट्रीय गौरव का प्रतीक बन सके। इस दृष्टि से देश की शिक्षा व्यवस्था आज पूर्णतः निष्फल है। उच्च प्राथमिक स्तर तक की शिक्षा मात्र स्कूल में नामांकन के पश्चात् समय गुजारने वाले साक्षर तैयार कर रहे हैं। माध्यमिक शिक्षा व उच्च शिक्षा भी मात्र कागज के प्रमाण-पत्र व उपाधिधारियों की फौज का उत्पादन कर रहे हैं। पाँचवीं व आठवीं स्तर के विद्यार्थियों को कक्षा दो व तीन की पुस्तकें पढ़ना नहीं आता है, साधारण अंकों की गिनती व गुणा-भाग, जोड़ व घटाना नहीं आता है? यह तथ्य प्रतिवर्ष प्रकाशित होने वाले शिक्षा के सर्वेक्षणों से सामने आ रहे हैं। चिन्ता का विषय तो यह है कि यह प्रवृत्ति थमने के बजाय बढ़ती जा रही है। अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगी परीक्षणों में भी भारतीय छात्रों के न्यून स्तर प्राप्त करने के उदाहरण विद्यमान हैं? सीनियर सैकेण्डरी की तो बात ही क्या की जाय विश्वविद्यालयों से निकले स्नातक व अधिस्नातक कहीं भी रोजगार पाने योग्य सिद्ध नहीं हो पा रहे। निपुण (Sbilled) श्रम शक्ति के स्थान पर पढ़ने-लिखने योग्य साक्षर शिक्षा व्यवस्था से निकल रहे हैं। खेदजनक स्थिति तो यह है कि आज तकनीकी शिक्षा की उपाधियों से युक्त 60 प्रतिशत स्नातक व अधिस्नातक रोजगार के योग्य नहीं हैं। यह एक अत्यन्त भयावह चित्र है, जो भारतीय जनमानस को विचलित करता है। इस दुरावस्था के अनेकानेक कारण गिनाये जा सकते हैं। आवश्यकता है कि कारणों का रचनात्मक विश्लेषण किया जाय। इन्हें दूर करने के यथेष्ट उपचार किये जायें। परन्तु इसके लिये मात्र सरकार ही नहीं वरन छात्र, अभिभावक, शिक्षक वर्ग व समाज की चिन्ता करने वाले सभी का दृढ़तापूर्वक लागू किया जाने वाला सक्रिय सहयोग आवश्यक है।

एक अच्छी शिक्षा व्यवस्था के लिये आवश्यक है कि वह व्यक्ति के ज्ञान के उच्चतम स्तर तक ले जाये व समाज के सामाजिक उद्देश्यों से युक्त योग्य नागरिकों का सृजन करें। श्रेष्ठता के उच्चतम स्तर पर

पहुँचने के लिये सभी समान अवसर उपलब्ध हों। शिक्षा ग्रहण करने वाला व्यक्ति ज्ञान के सर्वोच्च शिखर तक पहुँचे, आत्मनिर्भर, स्वावलंबी व समाज व राष्ट्रीय गौरव का प्रतीक बने। तथ्यों, घटनाओं व समस्याओं युक्तिपूर्ण विश्लेषण व समीक्षा कर उपयुक्त व न्यायोचित निष्कर्ष निकालने में समर्थ हो, तब ही शिक्षा को गुणवत्तापूर्ण कहा जा सकता है, व शिक्षा की उपलब्धि श्लाघनीय हो सकती है। इन सभी मानकों को पूर्ण करने में भारतीय शिक्षा व्यवस्था समर्थ नहीं है। शिक्षा की गुणवत्ता उस स्तर तक पहुँच चुकी है, जहाँ श्रेष्ठता व श्रेष्ठ उपलब्धि के स्थान पर सीखने के न्यूनतम स्तर की बात करनी पड़ रही है। शिक्षा का आधार प्रारंभिक शिक्षा या प्राथमिक शिक्षा है। प्राथमिक शिक्षा से अपेक्षा की जाती है कि इस स्तर के सभी शिक्षार्थियों को भाषा (मातृभाषा) व लिपि का ज्ञान, पढ़ने के कक्षा व आयुवार स्तर, संख्याओं का ज्ञान साधारण जोड़-बाकी गुणा-भाग का ज्ञान होना चाहिये व संबंधित स्तर की पाठ्यसामिग्री को पढ़ने व साधारण संख्याओं को उपयोग करने में समर्थ होने चाहिये। नैतिक शिक्षा का प्रारंभ व संस्कारों के निर्माण हेतु सामाजिक व सांस्कृतिक आख्यानों, उदाहरणों का व्यापक उपयोग होना चाहिये। राष्ट्र प्रेम, राष्ट्रीय गौरव व आत्मसम्मान के प्रति उन्हें शिक्षित किया जाना चाहिये। इन सभी के निरन्तर अभ्यास से व्यक्ति न केवल संस्कारवान बनता है, वरन वह शनैः शनैः परिस्थितियों का विश्लेषण करने निर्णय लेने की योग्यता विकसित कर सत्य-असत्य, उचित-अनुचित कार्य-अकार्य, न्याय-अन्याय को समझने लगता है। परन्तु यह सभी तो तब ही संभव होगा, जब शिक्षार्थी निरन्तर स्कूल जाय, स्कूल लगे व अध्यापक समर्पण भाव से विद्यार्थी को पढ़ाये। शिक्षण-प्रशिक्षण में समय-समय पर 'सीखने' का मूल्यांकन अपेक्षित है। यह मूल्यांकन मौखिक या लिखित परीक्षा के माध्यम से हो अथवा सतत् व व्यापक मूल्यांकन द्वारा हो या दोनों का ही आनुपातिक मिश्रण। मूल्यांकन आवश्यक है। परीक्षा निश्चित रूप से मानसिक तनाव व व्यग्रता उत्पन्न करती है। परन्तु क्या तनावमुक्ति के लिये मूल्यांकन को ही त्याग देना न्यायोचित है। दुर्भाग्य से शिक्षा के अधिकार के अन्तर्गत कक्षा 1 से 8 तक सभी प्रकार की परीक्षायें त्याग दी गईं। तनाव से मुक्ति की आड़ में बच्चों में पढ़ने के प्रति घोर उपेक्षा का भाव विकसित हुआ, शिक्षकों को भी दायित्व मुक्त होने का वातावरण मिला। परिणाम स्वाभाविक है। शिक्षाविदों व समाज की चिन्ता को साझा करते हुये राज्य सरकारें स्थिति में सुधार के लिये जागरूक हुई है और अनुभव किया है कि कक्षा एक से आठ तक अनेक मूल्यांकन अवरोध (Filter) होने चाहिये। अब सरकार शिक्षक अधिकार अधिनियम में संशोधन कर कक्षा 5 व 8 के स्तर पर मूल्यांकन परीक्षा का प्रावधान करने जा रही है। मूल्यांकन के लिये आवश्यक है, न्यून अधिगम स्तर निर्धारित किया जाय व उसकी उपलब्धि पर ही छात्र को आगे प्रोन्नत (Promilie) किया जाय। न्यूनतम अधिगम स्तर प्राप्ति के साथ-साथ ही श्रेष्ठ शैक्षिक उपलब्धियों पर ध्यान केन्द्रित किया जाय। इस लक्ष्य की प्राप्ति में शिक्षकों को समर्पण भाव से कार्य करना अतिआवश्यक है। सरकारों को भी शिक्षा व्यय में कृपणता को त्याग कर भविष्य में विनियोजन मानकर उदारतापूर्वक संसाधन उपलब्ध कराने चाहिये।

माध्यमिक स्तर की शिक्षा की स्थिति भी कुछ भिन्न नहीं है। इस स्तर की शिक्षा में शिक्षार्थी बहुआयामी शिक्षा ग्रहण करने लगता है। माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के साथ किसी न किसी प्रकार के कौशल में पारंगत किया जाना आवश्यक है। इस स्तर पर भी न्यूनतम अधिगम स्तर के मानक होने चाहिये व साथ ही श्रेष्ठ स्तर की प्राप्ति के प्रयास सम्मिलित होने चाहिये। इस स्तर पर भी यह उपयुक्त ही है कि दसवीं की परीक्षा को गृह परीक्षा के स्थान सार्वजनिक परीक्षा पुनः प्रारंभ करने का निर्णय किया गया है। इन सब प्रयासों में शिक्षा गुणवत्तापूर्ण बनाने में परीक्षा के साथ-साथ व्यक्तित्व निर्माण के लिये व्यापक व सतत् मूल्यांकन की व्यवस्था की जाय। उच्च शिक्षा का स्थान कुछ अर्थ में भिन्न होता है। इस स्तर पर ज्ञान प्राप्ति के साथ नये ज्ञान के सृजन के भी अवसर होते हैं। उच्च शिक्षा नये ज्ञान व तकनीक का सृजन कर ही विकास, आत्मनिर्भरता का वाहक बन सकती है। भारत जैसे विशाल जनसंख्या वाले देश में उपलब्ध गुणवत्तापूर्ण शिक्षण प्रशिक्षण प्राप्त कर परिवार, देश व समाज को सुचारू संचालन के योग्य बन सकते हैं। इसके लिये प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षा का स्तरीय होना आवश्यक है। उच्च शिक्षा इस प्रकार की हो जिसमें ग्रहण करने वाला व्यक्ति रोजगार के अवसरों का सृजन करने योग्य हो। यहाँ भी अधिगम के न्यूनतम स्तर के मानक अवश्य होने चाहिये व समयानुकूल होने चाहिये। उच्च शिक्षा से ही शोध व अनुसंधान का मार्ग निकलेगा। श्रेष्ठ व गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की उपलब्धि के लिये आवश्यक है कि शिक्षा के सभी स्तरों पर न्यूनतम अधिगम स्तर के मानक निर्धारित किये जाय। इनकी उपलब्धि की कार्ययोजना बनायी जाय। शिक्षकों के अनवरत प्रशिक्षण की व्यवस्था हो। शिक्षकों को शिक्षा के अतिरिक्त सभी प्रकार के कार्यों से मुक्त रखा जाय, शिक्षक भी शिक्षण को आजीविका न मानकर पूर्ण समर्पण व मिशन के रूप में छात्रों के निर्माण में योग दें। इन सभी के ऊपर सरकार का दायित्व है, उच्चतम शैक्षिक उपलब्धियों के लिये आवश्यक पूर्व शर्त समुचित वातावरण निर्माण करने व आर्थिक व वित्तीय संसाधन की कमी न आने दें। शिक्षा एक असाधारण सेवा कार्य है, मिशन है, इसे किसी भी रूप लाभदायक उद्योग रूप में बदलने से रोकना आवश्यक है। ❑

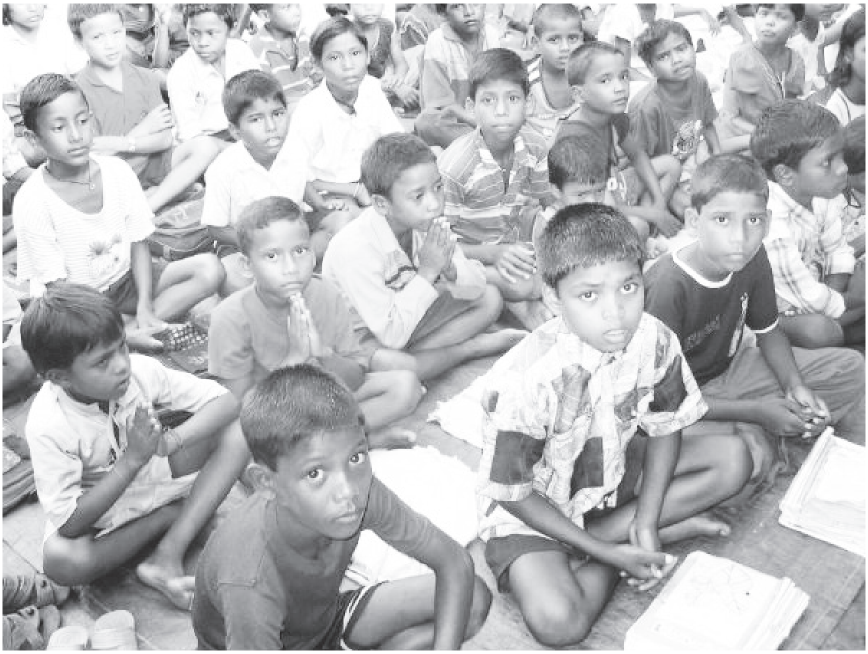

भारत को स्वतंत्र हुए 70 वर्ष पूरे हो रहे हैं। हम अब भी न्यूनतम अधिगम पर अटके हैं। आवश्यकता है कि विशिष्ट कौशलों के विकास की जो बालक को जीवन में स्वावलम्बन व रोजगार दे सकें। जो परिवारों को भविष्य की अनिश्चितताओं की चिंता से मुक्त कर सकें। ऐसे स्रोतों का विकास गाँव-गाँव, चौपाल-चौपाल और घर-घर हो, ताकि ना केवल बालक वरन् प्रौढ भी स्वतः शिक्षा प्राप्त कर सकें, व बच्चों को कर्मठ बनने की प्रेरणा मिले जिससे शिक्षा की अलख घर-घर जगा पाए। शिक्षा के प्रति आस्था उत्पन्न हो। शिक्षा व्यावहारिक बने, सैद्धान्तिक शिक्षा में उन तथ्यों व सिद्धान्तों को जोड़ें, जो बच्चों व उनके परिवारों से सम्बन्धित हो जैसे यदि कृषि व्यवसाय में परिवार जुड़ा है, तो मिट्टी से सम्बन्धित सभी जानकारियाँ, खाद, उन्नत बीज, कब-कौनसी फसल को बोना है, किस तरह से अलग-अलग पौधों के रोगों का उपचार किया जा सकता है, ये सभी जानकारियाँ उन्हें घर में काम करते-करते ही मिल जाती हैं।

अधिगम स्तर : वर्तमान परिदृश्य व चुनौतियाँ

❑ डॉ. इन्दुबाला अग्रवाल

गोपाल कृष्ण गोखले और अब्राहम लिंकन पूरे दिन घरवालों की मदद के पश्चात् रातों में सड़कों पर उपलब्ध नाइट लैंप्स के नीचे बैठकर अध्ययन किया करते थे। संसाधनों का अभाव था। गरीबी की मजबूरी थी। वे दिन में समय नहीं निकाल पाते थे, परन्तु अध्ययन के प्रति जज्बे ने उनका नाम इतिहास के पन्नों में सुनहरे अक्षरों से लिखवा दिया। लेकिन वर्तमान परिदृश्य की बात करें तो शिक्षा का गुणात्मक स्तर गिरता जा रहा है। विभिन्न सर्वेक्षणों की रिपोर्ट के आधार पर यह निष्कर्ष निकल कर आ रहा है। ये निष्कर्ष अधिकांशतः बड़े-बड़े शहरों में अच्छे स्कूलों के बच्चों पर किए गए सर्वेक्षणों पर आधारित हैं, जबकि भारत आज भी गाँवों का देश है। लगभग 65 प्रतिशत आबादी गाँवों में रहती है। कृषि अभी भी व्यवसाय का मुख्य स्रोत बना हुआ है तथा संरचनात्मक बेरोजगारी व अदृश्य बेरोजगारी यहाँ पर पाई जाती है। लगभग 26 प्रतिशत लोग गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन कर रहे हैं, जिनके पास जीवननिर्वाह के साधनों का नितान्त अभाव है। ऐसे परिवारों में बच्चे माता-पिता हेतु एक संबलन व सहारा हैं, जो छोटे-मोटे विभिन्न कार्यों को करके परिवार को चलाने में आर्थिक मदद देते हैं। सरकार सतत् रूप से प्रयासरत है कि हर बच्चे को स्कूल व्यवस्था से जोड़ा जाये, ताकि देश के सुनहरे भविष्य का निर्माण हो सके। सारे प्रयास नामांकन दर बढाने के लिए किए जा रहे हैं और इसमें सफलता भी मिली है। इसमें एक समस्या है अपव्यय व अवरोधन की। विद्यालयों में नामांकन बढ़ने के बावजूद कुछ बच्चे शिक्षा पूरी होने से पूर्व विद्यालय छोड़ देते हैं या कक्षा में असफल हो जाते हैं। अभिभावकों की गरीबी व मजबूरी को देखते हुए बच्चों को पौष्टिक भोजन (मिड-डे-मील), स्कूल पोशाकों व पुस्तकों का निःशुल्क वितरण व उन्हें छात्रवृत्तियाँ प्रदान करने की योजनाएँ शुरू की गई, जिससे नामांकन दर में सुधार हो सके। नामांकन दर में आशातीत वृद्धि हुई परन्तु इसके साथ-साथ शिक्षा के गुणात्मक स्तर में निरन्तर कमी दिखाई दी।

वांछित न्यूनतम अधिगम स्तरों के निर्धारण से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि शिक्षा में

गुणात्मक रूप से निरन्तर गिरावट के क्या कारण हैं? क्यों इतने प्रोत्साहनों के पश्चात् भी बच्चों में अपेक्षित जज्बे की कमी नजर आ रही है? क्या जो मापदण्ड हमने निर्धारित किए हैं, वो बच्चों की सामर्थ्य क्षमता से परे हैं या पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तकें व विद्यालयी वातावरण उनकी आवश्यकताओं व रुचियों को पूरा करने का सामर्थ्य नहीं रखता? क्यों अभिभावकों का भी शिक्षा व्यवस्था के प्रति विश्वास, आस्था का रूप नहीं ले सका है? इन सब कारणों का विश्लेषण व उपाय किया जाना नितान्त आवश्यक है। विदित है कि घोड़े को पानी तक खींचकर ले जाया जा सकता है परन्तु उसकी रुचि न होने पर पानी पीने हेतु बाध्य नहीं किया जा सकता।

हमारे शिक्षाविद् लाखों रुपए खर्च कर, समस्याओं के कारणों को तलाशने व सम्भावित समाधान के उपायों के लिए गहन विचार-विमर्श में जुटे हुए हैं। आखिर क्या कारण हैं कि उनके द्वारा निर्धारित मापदण्डों पर बच्चे खरे नहीं उतर रहे। वहीं दूसरी ओर शिक्षक जो चुनावी कार्य, जनगणना कार्य, चुनावी रैलियों आदि में उपस्थिति दर्ज करवाने में व वांछित जगह पर स्थानान्तरण करवाने हेतु राजनेताओं के चक्कर लगाने में इतने व्यस्त हैं कि विद्यालय में जाने या कक्षा में उपस्थित होने का उनके पास समय ही नहीं है।

कितने आश्चर्य की बात है कि बच्चा एक वर्ष में एक कक्षा में 365 दिन में से 200-250 दिन अर्थात् लगभग 1000-1250 घण्टे व्यतीत करता है, फिर भी न्यूनतम अधिगम स्तर नहीं प्राप्त कर पा रहा है। जबकि व्यवहारवादी वाट्सन ने कहा था कि मुझे कोई भी बच्चा ला दो, आप उसे जो बनवाना चाहते हैं, मैं अपने प्रयासों द्वारा निश्चित रूप से उसे वही बना दूँगा। अतः उचित परिस्थितियाँ उत्पन्न कर शिक्षकों को आवश्यक प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए, ताकि विद्यार्थी वांछित स्तर प्राप्त कर सकें। शिक्षा पर खर्च द्वारा मानवीय संसाधन को मानवीय पूँजी में बदला जा सकता है। विकसित राष्ट्र सकल घरेलू उत्पाद का 10 से 15 प्रतिशत तक शिक्षा पर खर्च कर रहे हैं, जबकि भारत जैसे देश में, जहाँ मानवीय श्रम बहुतायत में है, शिक्षा पर कुल बजट खर्च का 4 प्रतिशत भी खर्च नहीं किया जा रहा। पिछले तीन वर्षों के बजट में यह कुल बजट खर्च का 3 से 3.75 प्रतिशत के मध्य ही रहा है और इसमें निरन्तर गिरावट दर्ज की जा रही है। पढ़ेगा नहीं, तो भारत आगे कैसे बढ़ेगा। यह बात ध्यान दी जानी चाहिए कि इसमें भी शिक्षा पर जो खर्च किया जा रहा है उसका उपयोग व्यर्थ के आयोजनों में न किया जाकर इस प्रकार सुनिश्चित हो कि उसके निवेश का प्रतिफल समाज के निचले पायदान तक पहुँचे, जहाँ सर्वाधिक आवश्यकता है। आज अनेक ऐसे सरकारी विद्यालय हैं, जिनके पास अपने भवन नहीं हैं या जीर्ण-शीर्ण अवस्था में हैं। बच्चे उन भग्नावशेषों में जाने पर मजबूर हैं जहाँ कोई अध्यापक नहीं है या मात्र एक अध्यापक पूरे स्कूल को चला रहा है।

ये कुछ परिस्थितियाँ हैं, जिनको नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। परन्तु दूसरी तरफ यदि बच्चों को उनकी रुचि के अनुसार आवश्यक व जीवनोपयोगी बातें सिखाने पर जोर दिया जाए तो न्यूनतम अधिगम स्तर प्राप्त करने या शिक्षा को गुणवत्तापूर्ण बनाने हेतु अलग से प्रयासों की आवश्यकता नहीं होगी।

सोने को आग में तपा कर खरा कंचन बनाने हेतु या हीरे को तराशने हेतु मुक्कमल वातावरण (परिस्थितियाँ), कठोर परिश्रम और अनुशासित जीवन की आवश्यकता है। तब सही तौर पर हमारे द्वारा किए गए प्रयास सफल होंगे। कहते हैं कच्ची मिट्टी को हम किसी भी आकार या आकृति में ढाल सकते हैं यह हमारी सुरुचि व कल्पना है कि हम किस प्रकार की मूर्ति का निर्माण करना चाहते हैं। अतः केवल न्यूनतम अधिगम स्तरों का निर्धारण वर्तमान समस्या से निजात दिला पाएगा, संदेहास्पद है।

भारत को स्वतंत्र हुए 70 वर्ष पूरे हो रहे हैं। हम अब भी न्यूनतम अधिगम पर अटके हैं। आवश्यकता है कि विशिष्ट कौशलों के विकास की जो बालक को जीवन में स्वावलम्बन व रोजगार दे सकें। जो परिवारों को भविष्य की अनिश्चितताओं की चिंता से मुक्त कर सकें। ऐसे स्रोतों का विकास गाँव-गाँव, चौपाल-चौपाल और घर-घर हो, ताकि ना केवल बालक वरन् प्रौढ भी स्वतः शिक्षा प्राप्त कर सकें, व बच्चों को कर्मठ बनने की प्रेरणा मिले जिससे शिक्षा की अलख घर-घर जगा पाए। शिक्षा के प्रति आस्था उत्पन्न हो। शिक्षा व्यावहारिक बने, सैद्धान्तिक शिक्षा में उन तथ्यों व सिद्धान्तों को जोड़ें, जो बच्चों व उनके परिवारों से सम्बन्धित हो जैसे यदि कृषि व्यवसाय में परिवार जुड़ा है, तो मिट्टी से सम्बन्धित सभी जानकारियाँ, खाद, उन्नत बीज, कब-कौनसी फसल को बोना है, किस तरह से अलग-अलग पौधों के रोगों का उपचार किया जा सकता है, ये सभी जानकारियाँ उन्हें घर में काम करते-करते ही मिल जाती हैं। तो न्यूनतम अधिगम के सुनिश्चितीकरण की आवश्यकता उत्पन्न नहीं होती। इस प्रकार पाठ्यक्रम को सुनियोजित व संगठित किया जाना चाहिए। ताकि बच्चों की रुचि स्वतः ही उसमें जुड़ जाए। इससे कुटीर उद्योग धन्धों, कृषि पशुपालन आदि का विकास हो सकेगा और हर गाँव, हर घर, देश के पुनर्निर्माण में शामिल हो जाएगा। उसके पश्चात् बच्चों को निराश्रित छोड़ने के बजाय समुन्नत तकनीकी से अवगत करवा कर वैश्वीकरण हेतु तैयार किया जा सकता है ताकि विश्व प्रतिस्पर्धा में हम कहीं कमजोर न पड़ें। उन्हें ऋण की सुविधाएँ व बाजार उपलब्ध करवा कर डेमोग्राफिक डिविडेन्ड को पक्ष में किया जा सकता है और सर्वाधिक युवा लोगों के देश में युवाओं को हताशा से बचा कर स्वावलम्बी बनाया जा सकता है। ❑

(पूर्व तदर्थ व्याख्याता, रीजनल कॉलेज, अजमेर)

बढ़ता बोझ, घटता अधिगम

❑ विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी

देश स्वतन्त्र होने के तुरन्त बाद माध्यमिक शिक्षा आयोग ने कहा था कि माध्यमिक विद्यालयों में दी जाने वाली शिक्षा जीवन से कटी हुई है। शिक्षा के पाठ्यक्रम परम्परागत रूप से निर्धारित किए जाते हैं और उन्हें परम्परागत रूप से पढ़ाया जाता है। माध्यमिक शिक्षा विद्यार्थी के व्यक्तित्व विकास में असफल है। यह केवल कुछ शैक्षिक विषयों को पढ़ना व लिखना सिखाती है। जीवन से जुड़े गैर शैक्षिक पक्षों व भावनाओं का शिक्षा से कोई संबंध नहीं है। विद्यालयों में अंग्रेजी अनिवार्य होने के कारण अनेक विद्यार्थी माध्यमिक शिक्षा भी पूरी नहीं कर पाते हैं। आज सात दशक बाद भी स्थिति सुधरी नहीं, बिगड़ी ही है। वर्तमान सरकार से यह अपेक्षा की जा रही है कि वह स्थिति के बदलने का सार्थक प्रयास करे।

एक कहावत है ज्यों-ज्यों दवा की मर्ज बढ़ता ही गया। शिक्षा के विषय में कहा जाय तो गुणवत्ता का स्तर बढ़ाने के प्रयास में बच्चों का बस्ता तो भारी होता गया मगर अधिगम स्तर घटता गया है। प्रारम्भिक शिक्षा पूर्ण करने वाले अधिकांश विद्यार्थी ठीक तरह से पढ़ भी नहीं पाते, अर्थ निकाल कर प्रतिक्रिया देना तो बहुत दूर की बात है। महाविद्यालयों से निकलने वाले अधिकांश स्नातक अपना स्वयं का रोजगार ही प्रारम्भ कर पाते हैं, वाणिज्य क्षेत्र उन्हें नियुक्ति के योग्य नहीं मानता है।

इसका कारण यह नहीं कि हमारे पाठ्यक्रम कमजोर हैं, तुलनात्मक अध्ययन किया जाय तो हमारे पाठ्यक्रम विकसित देशों की तुलना में 21 ही होंगे 19 नहीं। परेशानी यह है कि हम अपने द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रमों को ठीक से सिखा नहीं पाते। परीक्षाओं में बच्चों के उत्तर का स्तर पाठ्यक्रम की तुलना में बहुत घटिया होता है फिर भी प्राप्तांकों का प्रतिशत बढ़ता जा रहा है। हमारी शिक्षा पर लिखित परीक्षा भारी है। समाज में वास्तविक ज्ञान की तुलना में अंकतालिकओं का महत्त्व बहुत बढ़ गया है। इस कारण नकल की प्रवृति को बल मिला है। पूर्व प्राथमिक कक्षाओं के टेस्ट भी बोर्ड परीक्षा का अहसास कराने लगे हैं। येन केन प्रकारेण प्राप्त अंकों को सफलता का पर्याय मान लिया गया है। अंकों के आधार पर ही बालक अगली कक्षा में जाता है। अंकों के आधार पर ही तथाकथित अच्छे शिक्षण संस्थानों में प्रवेश पाता है। भाषण देकर पाठ्यचर्या पूरी कराना तथा रटा कर अच्छे अंक दिलाना स्कूलों का कार्य हो गया है। अधिगम के न्यूनतम मगर स्पष्ट स्तर तय कर इस स्थिति को बदला जा सकेगा।

रोग पुराना है

इस समस्या को स्वतन्त्रता पूर्व ही पहचान लिया गया था। 1844 में लार्ड हार्डिग्स ने अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त युवकों को ही सरकारी नौकरी देने का आदेश जारी कर शिक्षा प्रणाली को विद्रूप कर दिया था। देश स्वतन्त्र होने के तुरन्त बाद माध्यमिक शिक्षा आयोग ने कहा था कि माध्यमिक विद्यालयों में दी जाने वाली शिक्षा जीवन से कटी हुई है। शिक्षा के पाठ्यक्रम परम्परागत रूप से निर्धारित किए जाते हैं और उन्हें परम्परागत रूप से पढ़ाया जाता है। माध्यमिक शिक्षा विद्यार्थी के व्यक्तित्व विकास में असफल है। यह केवल कुछ शैक्षिक विषयों को पढ़ना व लिखना सिखाती है। जीवन से जुड़े गैर शैक्षिक पक्षों व भावनाओं का शिक्षा से कोई संबंध नहीं है। विद्यालयों में अंग्रेजी अनिवार्य होने के कारण अनेक विद्यार्थी माध्यमिक शिक्षा भी पूरी नहीं कर पाते हैं। आज सात दशक बाद भी स्थिति सुधरी नहीं, बिगड़ी ही है। वर्तमान सरकार

से यह अपेक्षा की जा रही है कि वह स्थिति के बदलने का सार्थक प्रयास करे।

माध्यमिक शिक्षा अपने उद्देश्य को छोड़ कर बच्चों को महाविद्यालयी शिक्षा के लिए तैयार करने में लगी है। इसी कारण सामान्य बच्चों के लिए यह रुचिकर नहीं रहती और वे शिक्षा पूरी करे बिना ही स्कूल से बाहर चले जाते हैं। जर्मनी के उदाहरण से हमें सीख लेनी चाहिए। हेमबर्ग विश्वविद्यालय ने शोध कर बताया हैं कि जर्मनी में निरक्षरों की संख्या 75 लाख हो गई है। इसका कारण यह बताया गया कि जर्मन शिक्षा व्यवस्था प्रतिभावान बच्चों के लिए ही है। इस कारण सामान्य छात्र प्राथमिक शिक्षा पूरी करने से पहले स्कूल छोड़ देते हैं।

कथनी करनी का अन्तर

शिक्षा में कुछ भी कमी हो, दोष शिक्षकों को दिया जाता है। हमारी व्यवस्था में शिक्षा प्रशासन की कोई जिम्मेदारी नहीं है जबकि नीति का निर्माण प्रशासन द्वारा किया जाता है। 1986 की शिक्षा नीति में कहा गया कि ऐसे व्यक्ति को ही शिक्षक चुना जाएगा जो बच्चों में रुचि के प्रमाण देगा, जिसमें बच्चों के प्रति लगाव होगा, जिसमें रचनात्मकता और कुछ नया करने का भाव होगा, जो सामाजिक उत्थान के प्रति कटिबद्ध हो। मगर प्रशासन ऐसी व्यवस्था आज तक नहीं कर पाया है। अखिल भारतीय शिक्षा सेवा गठित करने की बात भी थी मगर अभी तक कुछ नहीं हुआ।

शिक्षक संगठनों की उपेक्षा

शिक्षकों के हितों के संरक्षण तथा अच्छी व्यवस्था को बनाए रखने में मजबूत व एकीकृत शिक्षक संगठनों की भूमिका को स्वीकार किया गया मगर क्रियान्वयन नहीं हुआ। शिक्षा समवर्ती सूची में होने के कारण केन्द्र सरकार कई योजनाएँ बना कर राज्यों की मदद करने का प्रयास करती है। इसके लिए वह अपना अलग प्रशासन, स्थापित करती है। इससे बना दोहरा प्रशासन लाभ के स्थान पर हानिकारक ही सिद्ध हुआ है। केन्द्र की योजनाओं का बजट वर्ष के अन्त में पहुँचने के कारण आनन फानन में आयोजन कर बजट खर्च करना व यूसी जारी करना ही एकमात्र ध्येय रह जाता है। वर्तमान सरकार ने इस समस्या को चिन्हित कर सुधार के प्रयास प्रारम्भ कर दिए हैं। शिक्षा क्षेत्र में होने वाली धन की बर्बादी को रोका जा सकेगा।

प्राथमिक कक्षाओं की पाठ्यचर्या ऐसी होनी चाहिए कि शिक्षा की उपलब्धियों को विद्यार्थी के व्यवहार में परिवर्तन के रूप में बताया जा सके। वह सूची में दिए करणीय कार्यों को उचित उपकरणों की सहायता से बिना झिझक बार बार करके बता सके। बहुत अधिक सिखाने की बजाय थोड़ा सीखें

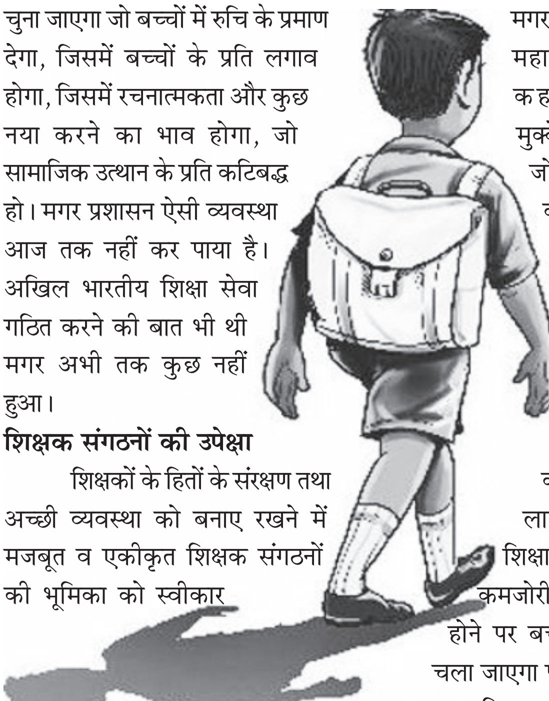

मगर जो सीखे पूर्णता से सीखें। महान मुक्केबाज ब्रूस ली कहता था कि उसे उस मुक्केबाज से भय नहीं लगता जो दस हजार प्रकार के वार करना जानता हो, ब्रूस ली को भय उस मुक्केबाज से लगता था जो एक ही वार का दस हजार बार अभ्यास करता था। आधा-अधूरा ज्ञान आत्मविश्वास पैदा नहीं करता। 36 प्रतिशत अंक लाने पर उत्तीर्ण करना ही शिक्षा प्रणाली की सबसे बड़ी कमजोरी है। 36 प्रतिशत अंक ज्ञान होने पर बच्चा अगली कक्षा में तो चला जाएगा पर क्या पढ़ सकेगा। क्या 36 प्रतिशत ज्ञान प्राप्त ड्राइवर को सड़क पर वाहन दौड़ाने की अनुमति दी जानी चाहिए? क्या लिखित परीक्षा में शत प्रतिशत अंक लाने वाला अच्छा ड्राइवर हो सकता है?

शिक्षा पर भारी परीक्षा

शिक्षक के कार्य का मूल्यांकन बच्चों द्वारा लिखित परीक्षा में प्राप्त अंकों के आधार पर किया जाता है। लिखित परीक्षा बच्चे के व्यवहारगत परिवर्तनों पर कोई प्रकाश नहीं डालती। अंक तालिका बच्चों को अच्छी नौकरी तो दिला सकती है मगर जीवन में सफलता की गारन्टी नहीं देती। गैर-संज्ञानात्मक गुण ही व्यक्ति को सफल बनाते हैं। इनके मापन पर हमारा कोई ध्यान नहीं है। महाभारत में एक प्रसंग आता है कि गुरु द्रोणाचार्य ने पाठ लिखा सदा सत्य बोलो। युधिष्ठर के अतिरिक्त सभी ने तुरन्त सुना दिया। अन्य के लिए पाठ का अर्थ केवल शब्दों को रटना था जबकि युधिष्ठर के लिए पाठ का अर्थ सत्य का जीवन में अभ्यास करना था। जीवन में सत्य के अभ्यास को लिखित परीक्षा से नहीं मापा जा सकता।

शिक्षा का सम्पूर्ण ढ़ाँचा, प्रशासन के हितों को ध्यान में रख रचा गया है। कलैण्डर, समय विभाग चक्र, डायरी आदि प्रशासन की अपनी सुविधा के लिए हैं। ये सीखने में सहायक नहीं, बाधक ही है। प्रशासन ऐसे रिकार्ड तैयार कराता है जिनका सही शिक्षा से कोई संबन्ध नहीं होता। परिणाम यह होता है कि शिक्षक बच्चे पर ध्यान कम और प्रशासन के कार्य पर अधिक देता है। लोकप्रिय सरकार पाँच वर्ष के लिए आती है। वह शिक्षा में क्रान्तिकारी परिवर्तन की बात तो करती है मगर इच्छा शक्ति के अभाव में यथास्थिति बनाए रखना ही उसका प्रयास होता है। प्रधानमंत्री कार्यालय ने मानव संसाधन मन्त्रालय को जून 2016 तक न्यूनतम अधिगम स्तर तय करने का लक्ष्य दिया था मगर कार्य अभी भी पूर्ण नहीं हो पाया है। ❑

(बाल एवं विज्ञान विषयक लेखक)

शिक्षण की प्राथमिकता-अधिगम

वर्तमान शिक्षण पद्धति में विद्यार्थी द्वारा सर्वाधिक अंकों की प्राप्ति शिक्षण की एकमात्र उपलब्धि है। अधिकतम शैक्षिक उपलब्धि के लिए शिक्षा की अनिवार्यता जैसे नियम केवल नामांकन संख्या बढ़ाते हैं इनसे शिक्षा ग्रहण करने की कोई बाध्यता नहीं होती है। आज विद्यार्थी रोजगार प्राप्ति के उद्देश्य से शिक्षण करता है। ज्ञान का अधिग्रहण करना अथवा स्वयं की अभिरुचियों को विकसित करने के उद्देश्य गौण हो गये हैं। औपचारिक शिक्षण प्रक्रिया में विद्यार्थी लेखन, वाचन एवं पठन-पाठन जैसी मूलभूत शैक्षिक उपलब्धियाँ प्राप्त करने से भी वंचित रहता है जबकि अनौपचारिक शिक्षण से विद्यार्थी अनेक कार्यों में कुशलता और दक्षता प्राप्त कर लेते हैं। यही कारण है कि विद्यार्थियों के नियमित व औपचारिक शिक्षण से ड्रॉप आउट की समस्या निरन्तर बढ़ती जा रही है।

❑ **डॉ. रेखा भट्ट**

भारतीय समाज में हमेशा से विद्यार्जन द्वारा ज्ञान प्राप्ति करना मानव जीवन की सर्वोच्च उपलब्धि एवं लक्ष्य रहा है। समाज में सभी के जीवन को उत्कृष्ट बनाने के लिए ज्ञान के अवदान में शिक्षक का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। इसलिए भारतीय शिक्षा परम्परा में गुरु को श्रेष्ठ स्थान प्राप्त है। श्रीमद् भगवद् गीता में ज्ञान द्वारा सभी का मार्ग दर्शन करने की प्रक्रिया को ''ज्ञान यज्ञ'' कहा गया है। भगवान श्री कृष्ण एक शिक्षक के रूप में अपने शिष्य अर्जुन से कहते है -

''श्रेयान्द्रव्यमयाद्यज्ञाज्ज्ञानयज्ञः परंतप।
सर्वकर्माखिलं पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते'' ।।

अध्याय 4, 33।।

अर्थात् - हे परन्तप! सभी प्रकार के द्रव्यमय यज्ञों से ज्ञान यज्ञ अत्यन्त श्रेष्ठ है। तथा जितने भी कर्म हैं वे सब ज्ञान में ही समाप्त होते हैं।

प्राचीन काल में भारतीय शिक्षा ''सा. विद्या या विमुक्तये'' के उच्चतम आदर्शों से अनुप्राणित थी। यहाँ गुरु व शिष्य दोनों ही पक्ष अपने सम्पूर्ण जीवनकाल में ज्ञानार्जन द्वारा स्वयं को जीवन के उच्चतम शिखर पर प्रतिस्थापित करने का प्रयास करते थे। शिक्षण का उद्देश्य भौतिक साधनों की प्राप्ति, विभिन्न सांसारिक पूर्तियों तक ही सीमित नहीं था। शिक्षक समग्र शिक्षण द्वारा विद्यार्थियों को तात्कालिक सामाजिक और राष्ट्रीय आवश्यकता के अनुरूप तैयार करते थे। विद्यार्थी भी अधिगम की प्रक्रिया में स्वयं को पूर्णतया समर्पित कर देता था। आर्य भट्ट, वराहमिहिर, पाणिणि, चरक, चन्द्रगुप्त, चाणक्य जैसे शिष्य इस समग्र शिक्षण और अधिगम प्रक्रिया के सर्वोत्तम उदाहरण हो सकते हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति से लेकर आज तक वर्तमान शिक्षा व्यवस्था और उसमें शिक्षकों का चयन, पाठ्यक्रमों का निर्माण, शिक्षा में नवाचार, शिक्षण और मूल्यांकन प्रक्रिया एवं अधिगम के तरीके भी पूर्णतया पाश्चात्य शैलियों का मिश्रित अनुकरण मात्र है। वर्तमान में सम्पूर्ण राष्ट्र में शिक्षा प्राप्ति के उद्देश्य ही नष्ट हो गए हैं। ऐसे में शिक्षण एवं अधिगम की प्रक्रिया भी विकृत हो गयी है। विद्यार्थी के साथ शिक्षक का प्रत्यक्ष संवाद एवं व्यवहार विद्यार्थी को ज्ञान ग्रहण करने के योग्य बनाता है। विद्यार्थी द्वारा आत्मसात् किया गया ज्ञान उसके भविष्य की सफलता का आधार बनता है शिक्षक द्वारा प्रत्येक विद्यार्थी के गुण-अवगुण पहचानते हुए उसकी सीखने की क्षमता के अनुसार शिक्षण की प्राथमिकताएँ निश्चित करना आवश्यक है।

वर्तमान शिक्षण पद्धति में विद्यार्थी द्वारा सर्वाधिक अंकों की प्राप्ति शिक्षण की एकमात्र

उपलब्धि है। अधिकतम शैक्षिक उपलब्धि के लिए शिक्षा की अनिवार्यता जैसे नियम केवल नामांकन संख्या बढ़ाते हैं इनसे शिक्षा ग्रहण करने की कोई बाध्यता नहीं होती है। आज विद्यार्थी रोजगार प्राप्ति के उद्देश्य से शिक्षण करता है। ज्ञान का अधिग्रहण करना अथवा स्वयं की अभिरुचियों को विकसित करने के उद्देश्य गौण हो गये हैं। औपचारिक शिक्षण प्रक्रिया में विद्यार्थी लेखन, वाचन एवं पठन-पाठन जैसी मूलभूत शैक्षिक उपलब्धियाँ प्राप्त करने से भी वंचित रहता है जबकि अनौपचारिक शिक्षण से विद्यार्थी अनेक कार्यों में कुशलता और दक्षता प्राप्त कर लेते हैं। यही कारण है कि विद्यार्थियों के नियमित व औपचारिक शिक्षण से ड्रॉप आउट की समस्या निरन्तर बढ़ती जा रही है।

आधुनिक भौतिकतावादी परिवेश में शिक्षा द्वारा आर्थिक उपलब्धि के लक्ष्य के साथ शिक्षण द्वारा आत्मसात किये गये जीवन मूल्य उसका मार्गदर्शन करते हैं। अत: जीवन में सफलता का सही दृष्टिकोण निर्मित हो तभी शिक्षण द्वारा विद्यार्थी को सही दिशा प्राप्त होती है। प्रत्येक विद्यार्थी में जिज्ञासाओं का समाधान प्राप्त करने की तीव्र आकाँक्षा होती है, जो शिक्षण द्वारा उसमें अधिगम की प्रक्रिया को गति प्रदान करती है।

शिक्षण के प्रत्येक स्तर पर विद्यार्थी के सामाजिक और भावनात्मक विकास का विशेष महत्त्व होता है। प्राथमिकताओं पर आधारित शैक्षणिक संरचना विद्यार्थी को परिवार एवं समाज के साथ सामन्जस्य करना सिखाती है मातृभाषा में शिक्षण होने पर वे अपने पारम्परिक जीवन मूल्यों के समझते हैं तथा अपनी संस्कृति की जड़ों से भी जुड़े रहते हैं। समग्र शिक्षण द्वारा विद्यार्थी को अपनी सभ्यता, संस्कृति और इतिहास का ज्ञान, उसमें अपने देश के प्रति गौरव का भाव जाग्रत करेगा, जो जवाहरलाल नेहरू वि.वि. की तरह शिक्षण संस्थानों को विद्यार्थियों द्वारा देश विरोधी गतिविधियों का केन्द्र बनने से रोकेगी।

वर्तमान शिक्षण प्रणाली में पुस्तकीय शिक्षण पर आधारित ज्ञान जानकारियों के पुनर्स्मरण के आकलन तक ही सीमित है। विद्यार्थी में आंतरिक प्रेरणा विकसित करने और उसके द्वारा अर्जित ज्ञान के परीक्षण की कोई सापेक्ष विधि नहीं है। विद्यार्थी की शैक्षणिक उपलब्धियों एवं सम्पूर्ण शिक्षण प्रक्रिया को व्यावसायिक बना दिया गया है। वर्तमान में शिक्षण, डिग्रियों व प्रश्नपत्रों का क्रय-विक्रय भी व्यवसाय के रूप में पनप रहा है। पाठ्यपुस्तकें कुंजियों से प्रतिस्थापित हो रही है तथा शिक्षण संस्थान कोचिंग संस्थानों से प्रतिस्थापित हो रहे हैं। शिक्षण द्वारा ज्ञान ग्रहण करने के स्थान पर डिग्रियों का प्रदर्शन अधिक सरल हो गया है। जबकि भारत ही नहीं सम्पूर्ण विश्व में ऐसे अनगिनत कई विद्वान, लेखक, वैज्ञानिक व कलाकार हुए है जिन्होंने कोई औपचारिक डिग्री प्राप्त नहीं की किन्तु वे स्वयं में एक पाठशाला है।

विद्यार्थी के शिक्षण और अधिगम का मूल्यांकन कर देने मात्र से ही शिक्षक की जवाबदेही पूर्ण नहीं होती। शिक्षक अपने अनुभवों द्वारा विद्यार्थी के सीखने की क्रिया-अधिगम में सहायता करे, उसकी अभिरुचियों के अनुसार गतिविधियों का संचालन करे तथा अपनी कक्षा के सभी विद्यार्थियों को सक्रिय बनाते हुए अधिगम को प्रेरित करके ही शिक्षण की प्रक्रिया को पूर्ण कर सकता है।

शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर विद्यार्थी के सीखने के तरीके व आवश्यकताएँ बदलती है। प्रत्येक चरण में उनके ग्रहण करने की क्षमताएँ भी भिन्न-भिन्न होती है। किन्तु शिक्षण द्वारा वर्तमान मूल्यांकन पद्धति एवं शैक्षिक मूल्यों के मापदण्ड भी एक ही प्रकार से निर्धारित किये गए हैं। शिक्षण में प्राथमिकताओं के अनुसार प्रत्येक स्तर अनुसार पाठ्यचर्या एवं शिक्षकों का निर्धारण करने की आवश्यकता होती है। शिक्षण के अनुकूल मूल्यांकन पद्धति द्वारा विद्यार्थी की उपलब्धियों की विश्वसनीयता बढ़ती है।

ज्ञानात्मक, गुणात्मक, भावात्मक, क्रियात्मक सभी प्रकार के शिक्षण का एक ही प्रकार से भौतिक या लिखित आकलन सम्भव नहीं होता है। विद्यार्थी के विभिन्न प्रकार के गुणों जैसे व्यक्तित्व, बुद्धि, अभिक्षमता, सामर्थ्य आदि का बोध लिखित परीक्षणों द्वारा सम्भव नहीं होता। परीक्षा में की गई त्रुटियों की जानकारी प्राप्त करने या उनमें सुधार करने का कोई अवसर वर्तमान शिक्षण पद्धति में प्रदान नहीं किया जाता है।

शिक्षण में आई कमियाँ विद्यार्थी के साथ अगली कक्षाओं में पदोन्नत होने के साथ सदैव के लिए बनी रहती है। आन्तरिक मूल्यांकन का विकल्प भी विद्यार्थी के प्रति शिक्षक की पूर्ण निष्पक्षता एवं सकारात्मकता की संभावनाओं को समाप्त कर देता है।

संख्यात्मक एवं मात्रात्मक विश्लेषण द्वारा किये गये शैक्षिक मूल्यांकन में संतोष जनक या असन्तोषजनक की स्थिति का निर्धारण विद्यार्थी के सीखने की प्रक्रिया को स्थगित कर देता है। गुणात्मक विश्लेषण द्वारा उसे आगे बढ़ाए जाने के प्रयासों का प्रयोजन नही होता, क्योंकि विद्यार्थी की अन्य क्षेत्रों में निपुणता व सामर्थ्य का पूर्व आकलन नहीं किया जाता और यह विद्यार्थी के अग्रिम विकास को बाधित करता है।

विद्यार्थी अपनी विशिष्टताओं के अनुसार प्रत्येक विषय में स्वयं को अभिव्यक्त करने के अवसर प्रदान किये जाने पर वे नये विचारों एवं अवधारणाओं का सृजन करना सीखेंगे। रचनात्मकता बढ़ेगी, समस्याओं का विश्लेषण करने तथा स्वयं निर्णय करने योग्य बनेंगे।

शिक्षण एक निरन्तर चलने वाली सतत् प्रक्रिया है समग्र शिक्षण द्वारा विद्यार्थी का व्यक्तित्व विकास सम्पूर्ण शिक्षणकाल की उपलब्धि व्यक्त करता है तथा उनका परीक्षण एवं मूल्यांकन विद्यार्थी की अन्तर्निहित क्षमताओं को बाहर लाने का माध्यम है।

शिक्षण प्रक्रिया विद्यार्थी के सम्पूर्ण विकास में सहभागी होती है। और देश का श्रेष्ठ नागरिक निर्माण करती है। ❑

(व्याख्याता-रसायन शास्त्र, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर)

न्यूनतम अधिगम स्तरों के निर्धारण की आवश्यकता का उदय सभी बच्चों को सफलता समान अवसर और सुविधाएँ दिये जाने की आवश्यकता है, चाहे वे किसी भी जाति, पंथ, स्थान या लिंग के हों। समिति ने प्राथमिक स्तरीय शिक्षा के प्रचलित पाठ्यचर्या की जाँच प्राथमिक विद्यालय के अध्यापकों, अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों के अनुदेशकों, प्रतिष्ठित शिक्षा शास्त्रियों और राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषदों की की सहायता से कार्यशाला एवं बैठकों की एक शृंखला में की। जिस पाठ्यचर्या के लिए सिफारिश की गई है प्राथमिक स्तर के बच्चों से अपेक्षित वर्तमान सूचनाभार को पर्याप्त रूप से कम कर रही है और ऐसा करके, अधिगम प्रतिफलों की प्रासंगिकता, कार्यपरकता सुनिश्चित करने का प्रयास करती है।

कैसे बढ़े शिक्षा की गुणवत्ता

❑ **बजरंगी सिंह**

शिक्षक समाज की सर्वाधिक संवेदनशील इकाई है। शिक्षक अपना काम ठीक से नहीं करते यह आरोप सर्वथा लगाया जाता है। लेकिन यह विचार कोई नहीं करता कि उसे पढ़ाने क्यों नहीं दिया जाता? आए दिन गैर शैक्षिक कार्यों में इस्तेमाल करते हुये प्रशासन, शिक्षकों के शैक्षिक सोच को, शैक्षिक कार्यक्रमों को पूरी तरह ध्वस्त कर देता है। बच्चों को पढ़ाना-लिखाना सरल नहीं होता और न ही बच्चे फेल होते हैं। प्रशासनिक अधिकारीगण शिक्षा और शिक्षकों की लगातार उपेक्षा करते हैं। उन्हें काम नहीं करने देते। इसी कारण स्कूली शिक्षा में अपेक्षित सुधार नहीं हो पा रहा है।

स्कूली शिक्षा बेहतर बनाने के लिए हमें स्कूल के बारे में अपनी परम्परागत राय को बदलना होगा। अभी स्कूलों को कार्यालय समक्ष कर शिक्षकों को प्रतिदिन अनेक प्रकार की डाक बनाने और आँकड़े देने के लिए मजबूर किया जाता है। इससे बच्चों की पढ़ाई में व्यवधान होता रहाता है। बच्चे अपने शिक्षकों से सतत् जुड़े रहना चाहते हैं, विशेषकर प्राथमिक स्तर पर। अत: स्कूलों को कार्यालयीन कार्यो से मुक्त कर प्रभावी शिक्षण संस्थान बनाना चाहिए।

हमारे शासकीय विद्यालय बाल शिक्षण (6-14 आयु वर्ष के बच्चों) के लिए कार्य कर रहे हैं। शिशु शिक्षण के लिए संचालित आँगनबाड़ी और प्रौढ़ शिक्षा के लिए कार्यरत सतत् शिक्षा केन्द्रों का सम्बन्ध विद्यालय से कहने भर को है। वास्तव में इन सभी के बीच बेहतर तालमेल जरुरी है यदि तीनों एजेन्सी एकीकृत स्वरूप में कार्य करने लगे तो सम्भव है कि स्कूल की कार्यावधि 12 से 14 घण्टे प्रति दिन तक हो जाए। साथ समुदाय के सभी वर्गो के लिए स्कूल में प्रवेश और सीखने के अवसर बढ़ सकते हैं।

अभी अधिकाँश स्कूल अन्य सरकारी कार्यालय के तर्ज पर 10 से 5 की अवधि में खुलते है। इस कारण से रोजगार से जुटे परिवारों के बच्चों के लिए वे अनुपयोगी सिद्ध हो रहे हैं। स्कूल की समयावधि सरकारी नियंत्रण में होने के कारण बच्चों की उपस्थिति और सीखने का समय कमतर होता जा रहा है। स्कूली उम्र पार कर चुके किशोरों, युवाओं, महिलाओं और कामकाजी लोगों के लिए स्कूल के दरवाजे एक तरह से बन्द ही है। विद्यालय समाज की लघुत्तम इकाई के रुप में ''सामाजिक शिक्षण केन्द्र'' के रुप में कार्य कर सकते हैं। इस परिकल्पना को साकार करने की दिशा में पहल किए जाने का दायित्व स्थानीय ''पालक शिक्षक

संघ'' पूरा कर सकते हैं। अगर समाज की जरूरत के चलते चिकित्सालय और थाने दिन-रात खुले रह सकते हैं, तो यह भी उतना ही आवश्यक है कि विद्यालय कम से कम 12-16 घण्टे जरूर खुलें। शैक्षणिक सुधार में शिक्षक की भूमिका महत्वपूर्ण है। पाठ्यपुस्तकों और पाठ्यक्रम के अनुरूप शिक्षण, शिक्षक की योग्यता, प्रक्रिया और पढ़ाने के कौशल पर निर्भर है। एक शिक्षक एक साथ कितनी कक्षाओं के कितने बच्चों को भली-भांति पढ़ा सकेगा इस बारे में भी गम्भीरतापूर्वक विचार करने की जरूरत है।

आदर्श रूप में एक शिक्षक अधिकतम 20 बच्चों को ही ठीक प्रकार से पढ़ा सकता है। वह भी तब जब वे भी एक समान स्तर के हों। अभी व्यवस्था यह है कि एक शिक्षक 30-40 बच्चों को (और वे भी अलग अलग स्तरों के होते हैं) पढ़ाएगा। अनेक स्कूलों में तो 70-80 से भी अधिक बच्चों को पढ़ाना पड़ रहा है। ऐसे में शिक्षक का मात्र बच्चों को घेर कर ही रख पाते हैं। पढ़ाई तो सम्भव नहीं है। शिक्षक बच्चों को पढ़ा भी पाये इस हेतु शिक्षक छात्र अनुात व्यावहारिक बनाना होगा।

स्कूली शिक्षा में सुधार के लिए शिक्षण विधियों, प्रशिक्षण और परीक्षण की विधियों में भी सुधार करने की जरूरत है। अभी शिक्षण की विधियाँ राज्य स्तर से तय की जाती हैं। कक्षागत शिक्षण कौशलों को या तो नकार दिया जाता है या उन्हें परिस्थितिजन्य मान लिया है। अच्छे प्रशिक्षण के लिए प्रशिक्षण का दायित्व कर्तव्यनिष्ठ, योग्य और क्षमतावान शिक्षकों को सौंपा जाना चाहिए। शिक्षकों के प्रशिक्षण को प्रभावी बनाने, शिक्षण में नवाचार पद्धतियों को विकसित करने सहित परीक्षण (मूल्यांकन) की व्यापक प्रविधियाँ तय कर उन्हें व्यवहारिक स्वरूप में लागू करने की दिशा में कारगर कदम उठाने की दृष्टि से यह आवश्यक है। कि हर प्रदेश में एक ''शैक्षणिक संदर्भ एवं स्त्रोत केन्द्र विकसित किया जाए।

शिक्षा में प्रणाली सफलता का एक प्रभावशील सूचक विद्यालय में बच्चों द्वारा अधिगम के सुनिर्धारित स्तरों की संप्राप्ति है। इसी संदर्भ, राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1986 में विद्यालय के प्रत्येक स्तर पर न्यूनतम अधिगम स्तरों के निर्धारण के शिक्षक के निष्पादन लक्ष्यों के निर्धारण की पूर्ण शिक्षा मान कर, उसकी आवश्यकता पर बल दिया गया है। इसकी कल्पना इसलिए की गई थी कि अध्ययन-अध्यापन अनुभवों के आयोजन में छात्र संप्राप्ति के मूल्यांकन में इससे प्रभावी मार्गदर्शन हो सके।

न्यूनतम अधिगम स्तरों के निर्धारण की आवश्यकता का उदय सभी बच्चों को सफलता समान अवसर और सुविधाएँ दिये जाने की आवश्यकता है, चाहे वे किसी भी जाति, पंथ, स्थान या लिंग के हों। समिति ने प्राथमिक स्तरीय शिक्षा के प्रचलित पाठ्यचर्या की जाँच प्राथमिक विद्यालय के अध्यापकों, अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों के अनुदेशकों, प्रतिष्ठित शिक्षा शास्त्रियों और राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषदों की की सहायता से कार्यशाला एवं बैठकों की एक शृंखला में की।

जिस पाठ्यचर्या के लिए सिफारिश की गई है प्राथमिक स्तर के बच्चों से अपेक्षित वर्तमान सूचनाभार को पर्याप्त रूप से कम कर रही है और ऐसा करके, अधिगम प्रतिफलों की प्रासंगिकता, कार्यपरकता सुनिश्चित करने का प्रयास करती है। यह अपेक्षा की जाती है कि प्रति अधिगम प्रतिफलों को सभी छात्र, एक निर्धारित समय सीमा में और उचित सुविधा निवेशों के साथ पूर्ण दक्षता स्तर प्राप्त करेंगे। एक व्यापक मूल्यांकन प्रणाली के विकास से जुड़े हुए ये न्यूनतम अधिगम स्तर अध्यापक तथा प्रणाली की निष्पादन प्रभावोत्पदकता का संकेत प्रदान करेंगे।

प्रत्येक व्यक्ति प्रतिदिन नए-नए अनुभव एकत्रित करता है, इन नए अनुभवों से उनके व्यवहार में परिवर्तन आता है। इस प्रकार नए अनुभव एकत्रित करना तथा इनसे व्यवहार में परिवर्तन आने की प्रक्रिया ही अधिगम है। अधिगम प्रक्रिया निरंतर चलने वाली और सार्वभौमिक प्रक्रिया है। इस प्रकार स्पष्ट है कि सीखना अनुभव द्वारा व्यवहार में परिवर्तन है। सीखना या अधिगम एवं व्यापक सतत् एवं जीवन व्यापी प्रक्रिया है। मनुष्य जन्म के उपरान्त सीखना प्रारम्भ कर देता है और जीवन भर कुछ न कुछ सीखता रहता है। धीरे-धीरे वह अपने को वातावरण से समायोजित करने का प्रयत्न करता है। इस समायोजन के दौरान वह अपने अनुभवों से अधिक लाभ उठाने का प्रयास करता है जिस व्यक्ति में सीखने की जितनी अधिक शक्ति होती है, उतना है उसके जीवन का विकास होता है। ❑

(स्वतंत्र लेखक)

शिक्षा की दशा व दिशा

❑ श्रीमती ममता मंजुनाथ

सरकार को शिक्षा की दशा और दिशा का सही परिचय रहना अत्यावश्यक है। एक तरफ सरकार शिक्षा में सुधार की योजनाएँ बनाने में दिलचस्पी दिखाती हैं, तो दूसरी ओर उन योजनाओं के सही क्रियान्वयन की ओर सकरात्मक पहल नहीं दिखातीं। योजनाओं को बनाते समय उच्चस्तर के शिक्षा तज्ञों से, शिक्षकों से सलाह नहीं लेती। योजनाएँ राजनीति प्रेरित होती हैं। शिक्षा में सुधार की योजनाओं को लागू करने के लिए कुछ सालों का अंतर होना अत्यंत आवश्यक है । सरकार बार-बार ऐसा नियम बनाती है कि शिक्षक एक सुधार को लागू करने की प्रयत्न करते रहते हैं कि सरकार दूसरी सुधार को लागू करने के लिए कहती है । ऐसे करने से शिक्षक दुविधा में पड़ जाते हैं ।

गिरते शैक्षिक स्तर के कारण :

जिस देश में भगवान श्री कृष्ण और सुदामा एक ही आश्रम में शिक्षित हुए हो, उसी देश में आज विद्यालयों का विभाजन हो चुका है। कुकुरमुत्तों के तरह प्राइवेट स्कूल खुल रहे हैं। प्राइवेट स्कूलों को खोलने वाले कोई तज्ञ या शिक्षा प्रसार में अभिरुचि रहने वाले व्यक्ति नहीं। स्कूलों को खोलना धन कमाने का तंत्र बन गया है।

सरकार को शिक्षा की दशा और दिशा का सही परिचय रहना अत्यावश्यक है। एक तरफ सरकार शिक्षा में सुधार की योजनाएँ बनाने में दिलचस्पी दिखाती हैं, तो दूसरी ओर उन योजनाओं के सही क्रियान्वयन की ओर सकरात्मक पहल नहीं दिखातीं। योजनाओं को बनाते समय उच्चस्तर के शिक्षा तज्ञों से, शिक्षकों से सलाह नहीं लेती। योजनाएँ राजनीति प्रेरित होती हैं। शिक्षा में सुधार की योजनाओं को लागू करने के लिए कुछ सालों का अंतर होना अत्यंत आवश्यक है। सरकार बार-बार ऐसा नियम बनाती है कि शिक्षक एक सुधार को लागू करने की प्रयत्न करते रहते हैं कि सरकार दूसरी सुधार को लागू करने के लिए कहती है। ऐसे करने से शिक्षक दुविधा में पड़ जाते हैं।

आज की पाठ्यक्रम में जीवनयापन की कोई कला सिखाने वाली बात नहीं होती। पाठ्यक्रम बदलाव में कुछ सालों का अंतर नहीं रहता। पाठ्यक्रम बनाते वक्त शिक्षा तज्ञों, शिक्षकों की सहमत नहीं लेते। शिक्षा में अभिरुचि रखने वाले शिक्षकों की नियुक्ति नहीं होती। एक बार नियुक्त हुए तो उनके ज्ञानाभिवृद्धि की परीक्षा नहीं होती।

निवारण :

सरकारी स्कूलों को महत्त्व देना चाहिए। प्राइवेट स्कूलों को अनुमति देते वक्त उनके स्कूल खोलने के वजह के बारे में देखना चाहिए। शिक्षा प्रसार में अभिरुचि रखने वाले व्यक्तियों को ही अनुमति देनी चाहिए। अगर वे वहाँ धन कमाने की सोच रहे हैं तो उनको अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। योजनाएँ बनाते वक्त शिक्षा तज्ञों, शिक्षकों की सलाह लेना अत्यंत आवश्यक होनी चाहिये। योजनाओं को लागू करने के लिए कुछ सालों का अंतर रहना चाहिए।

पाठ्यक्रम ऐसे होने चाहिए जिससे जीवनयापन करने की प्रायोगिक प्रशिक्षण मिले। छात्रों को जीवन मूल्यों से परिचित अत्यंत आवश्यक है। पाठ्यक्रम बनाते वक्त यह ध्यान में रहना चाहिए कि जिससे छात्रों के बौद्धिक ज्ञान, मूल्यनिष्ठा के साथ जीविकोपार्जन की क्षमता भी बढे ।

शिक्षकों की नियुक्ति करते समय उनकी शिक्षा के स्तर, शिक्षा में अभिरुचि और उनमें निहित जीवनमूल्यों को जाँचना आवश्यक है।

शिक्षा का मूल उद्देश्य छात्रों का सर्वांगीण विकास करना और देश सेवा करना होना चाहिए। इसके लिए शिक्षक, आचार्य चाणक्य का उदाहरण ले सकते हैं जिन्होंने अपना शिक्षण धर्म बखूबी निभाया, देश के प्रति भी और समाज के प्रति भी। अभिभावकों को भी अपनी बच्चों की शाला, अध्यापकगण, पाठ्यक्रम के बारे में जानकारी रखनी चाहिए और अपने बच्चों को काम में न लगाकर स्कूल भेजना चाहिए। जहाँ चाह है, वहाँ राह है।

सरकार, शिक्षा तज्ञ, शिक्षक, अभिभावक, समाज क्षेत्र व शिक्षा से संबद्ध निरन्तर सभी को शिक्षा के गिरते स्तर को ऊपर उठाने हेतु जल्दी से जल्द ध्यान देना आवश्यक है। ❑

(सहायक अध्यापिका)

Concept of MLL is not new. The NPE 1986, revised in 1992 and POA 1992 emphasise that the minimum levels of learning should be laid down and children's learning should periodically be assessed to keep a track of their progress towards ensuring the achievement of NPE goal that all children should acquire at least MLLs. MLLs were developed class-wise and subject-wise for primary stage in 1992 in the form of competencies to put into practice the NPE formulations. However later on it was realised that development of class-wise competencies made this exercise more product and rubric-oriented rather than facilitating overall development of children and improving the quality of learning.

Need of Attainment of Minimum Levels of Learning

❑ **Dr. Prakash Chandra Agarwal**

The development of any nation depends utmost on its educational scenario. In ancient times our country's educational scenario was so splendid that India was used to be known as 'Visva-Guru'. Later on aggression and intrusion of several groups of outsiders including Mughals and Britishers and taking over power as rulers not only ruined its wealth but also distorted and deformed its educational scenario to meet their requirements and leading the country intentionally in an educationally backward one. This resulted in a fast degradation of cultural and social values. Self esteem of citizens lowered down to a great extent. A large number of people became uneducated and illiterate. Vocational structure and skilful engagement of citizens also came down. In post independent era there have been consistent efforts on providing access of educational opportunities to all the citizens. Recently a lot of emphasis has been given on Education For All (EFA). Sincere efforts are going on for Universalization of Elementary Education (UEE) since a long back with its further extension to Universalization of Secondary Education (USE). A large amount of money is being spent in Sarva Shiksha Abhiyan (SSA) and Rashtriya Madhyamic Shiksha Abhiyan (RMSA) to achieve these goals. Inclusive school system or common school system along with enactment of RTE 2009 has further emphasized that none in age group of 6-14 years is left out from getting elementary education. In Rajasthan Child Tracking Scheme (CTS) was a sincere effort for this. In inclusive growth, it is intended that every child should be covered under the umbrella of access to the basic education irrespective of caste, locality, religion, socio-economic-status etc. Not only children of disadvantaged groups

of society or differently-abled children were kept in focus rather it encompasses zero-rejection policy as far as access/admission is concerned. However, in widening access of elementary education with equity and inclusive growth, quality is compromised. So these days inclusive growth with quality has become an issue of great concern.

Teaching, learning and evaluation are interwoven and since learning is a continuous process, so implementation of Continuous and Comprehensive Evaluation (CCE) in its true spirit is highlighted in almost all the reports and policy documents. Formative assessment during formation or construction of knowledge is meant to provide timely feedback. This gives a thought that if CCE is implemented in its true spirit involving the last achiever (weakest child)in the process of learning actively and enthusiastically with continuous monitoring and feedback, no pursuant (child) will score less than passing marks in their term exams (summative evaluation). Also, to check the drop out rate and overcome the stagnation problem 'no detention policy' was adopted. However, impact due to no detention policy; different studies, survey reports of various agencies including NGOs and foreign organisations (like PISA) engaged in organising achievement surveys and the reports of Joint Review Mission for SSA of last few years also mentioned that the learning levels of children are not up to the desirable level rather these are very poor.

So enrolment of children of age-group 6-14 years is increased in schools to a high extent but quality is lost. We are unable to create meaningful learning situations in actual classrooms to bring the last achieving student in the main stream of classroom proceedings. The implementation of formative part of CCE in true spirit is failed In spite of considering teachers' increased role as facilitator in constructivist paradigm than in behaviourist/objectivist approach; the results in this regard are not good. The quality of learning is definitely a reflection of teachers. Teachers should not only be the best in content but also should be well aware with pedagogical aspects and recent technological developments. Hence Technology integrated Pedagogical Content Knowledge (TPCK) level of teachers and then its effective use in classrooms is high demand of the time. Thus, updation and empowerment of teachers in teaching skills is one of the major areas of concern. For preparation of quality teachers that too in such a large number, functioning of teacher training institutes need to be overhauled. Lack of quality teacher educators/ teachers, low number of good teachers training institutes, insufficient teaching staff, lack of infrastructural facilities, undesired

and unwanted intervention of bureaucrats and politicians in area of education, socio-economic status of children and their parents, their educational family background, demotivation due to increased unemployment of unskilled degree holders etc. are few reasons of decreased achievement level.

Poor performance of children in upper primary classes due to their promotion under no detention policy without their proper formative/diagnostic/summative evaluation has compelled educationists to rethink about older concept of assessing Minimum Levels of Learning (MLLs) or learning outcomes on the basis of learning indicators.

Concept of MLL is not new. The NPE 1986, revised in 1992 and POA 1992 emphasise that the minimum levels of learning should be laid down and children's learning should periodically be assessed to keep a track of their progress towards ensuring the achievement of NPE goal that all children should acquire at least MLLs. MLLs were developed class-wise and subject-wise for primary stage in 1992 in the form of competencies to put into practice the NPE formulations. However later on it was realised that development of class-wise competencies made this exercise more product and rubric-oriented rather than facilitating overall development of children and improving the quality of learning. Later on certain curricular expectations were made stage wise. In Rajasthan, Lok Jumbish Project followed the concept of MLLs.

Looking into present scenario of educational achievements

again the issue of MLLs is coming up. Even one step further to this, assessment of learning outcomes and improvement of learning outcomes is talked about after development of learning indicators. The learning outcomes are generally treated as assessment standards and equated with the expected levels of learning on the part of children. Learning indicators are expected to provide evidences of learning and other changes taking place in child's behaviour. These indicators can be used as check points to assess child's learning at different points of time. However learning indicators, when given along with the pedagogical processes, are likely to help teachers and children to achieve these curricular expectations as well as learning outcomes. The Learning Indicators are expected to help stakeholders in a number of ways.

Achievement of MLLs may help in assessing product part but learning outcomes will take care of assessment of both product and process, followed to reach to the product. This may be the possible remedy to check the fall in achievement levels. Common core competencies are required up to secondary school level. However, after secondary level, particular streams are opted by the pursuant leading to different professional lines where the gate ways are opened for skilled workforce and expertise or professionals in different areas. So these techniques fit for school system may not deem fit for evaluation of achievement at higher educational level. However, some new evaluation strategy needs to be evolved for higher education system to check the steeper fall in actual realization of processes and real learning to take place. A lot more is to be discussed for getting path showing outcomes. Best practices developed by different nations/ stakeholders are to be looked into them and then possible system is to be evolved suitable for our educational system. ❑

(Professor of Physics, Regional Institute of Education, Ajmer)

बालक जन्म से ही सीखना प्रारम्भ कर देता है व यह प्रक्रिया आजीवन-अनवरत प्रवाहित होती रहती है। परंतु जब हम विद्यालय या शैक्षिक संस्था के वातावरण में कुछ निर्धारित पाठ्यक्रम के जरिए सीखने-सीखाने की बात करते हैं तो इस सीखने की प्रक्रिया को चिह्नित करना आवश्यक है। वास्तव में ये वे संकेतक (Indicator) हो सकते हैं। जिनके द्वारा बालक भाषा, विज्ञान, सामाजिक व मानविकी विषयों के साथ-साथ संस्कारों को भी ग्रहण कर सकता है। इसलिए भाषा संकेतकों को समझने के दौरान सुनने-बोलने, पढ़ने-लिखने जैसे कौशलों को व्यापक नजरिये से समझना व अनुभव करना चाहिये और भाषायी कौशलों को यांत्रिकता के सीमित दायरों से बाहर निकलना चाहिये।

प्रतिभा नवोन्मेष की आधारशिला-अधिगम

❑ **प्रो. मधुर मोहन रंगा**

किसी भी देश का शिक्षा तंत्र उसके संविधान की तरह ही उसकी आत्मा का प्रतिनिधित्व करता है। इसी कारण हमारा मुख्य उद्देश्य साम्राज्यवादी-सामंतवादी शिक्षा प्रणाली के अवशेषों को मिटाकर, भारतीय संस्कृति के अनुसार-आधुनिकीकरण की ओर बढ़ते समुदाय की नई आवश्यकताओं, आकाँक्षाओं और माँगों के अनुरूप, राष्ट्रीय विकास, भ्रातृत्त्व, एकात्मकता, सामाजिक न्याय व समावेशी उन्नति को आधार मानकर शिक्षा का प्रचार-प्रसार व विस्तार होना चाहिये। जब हम सम्पूर्ण विकास की बात करते हैं, तब ध्यान शिक्षा पर ही केन्द्रित हो जाता है क्योंकि इसी के मूल में ही सर्वांगीण विकास का बीज सुसुप्त अवस्था में रहता है, उसे जाग्रत करने की आवश्यकता है, जिसके मूल में अधिगम ही रहता है। देश के शैक्षणिक उन्नयन के लिए योजनागत विकास के द्वारा विभिन्न प्रयास किये गये। समयानुकूल समग्र-नीति का निर्माण भी किया गया। शिक्षा के अन्तर्निहित उद्देश्यों जैसे- पहुँच, समानता, गुणवत्ता, अनुसंधान व नवाचार आदि को प्राप्त करने के लिए सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का प्रयोग किया जा रहा है। जैसे- ई-शिक्षा, आभासी प्रयोगशालाएँ, ऑन-लाइन शिक्षा की उपलब्धता, सतत् मूल्यांकन, अन्तरविषयी-अधिगम-व्यवस्था आदि प्रयास किये जा रहे हैं। समय-समय पर शिक्षा में यथायोग्य परिवर्तन, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग व अन्य शिक्षा निकायों, राज्य सरकारों के द्वारा विभिन्न निर्देश प्रदान किये जाते रहे हैं। देश के संविधान निर्माताओं ने सबको शिक्षा के लिए 67 वर्ष पहले ही प्रावधान बना दिया था। हालांकि इसे वास्तविक रूप लाने में 50 वर्षों से ज्यादा समय लग गया। 12 दिसम्बर, 2002 को संविधान में 68 वाँ संशोधन कर शिक्षा को मौलिक अधिकार का स्थान दिया गया। इसे प्रभावी बनाने के लिए 2005 में शिक्षा का अधिकार विधेयक प्रस्तावित किया गया और अप्रैल, 2010 को यह लागू किया गया। संविधान निर्माताओं के द्वारा 1950 में की गई पहल का असर अब साफ दिखाई देता है। इस अधिकार के लागू होने के बाद प्राइमरी स्तर और अपर प्राइमरी स्तर पर एनरोलमेंट तेजी से बढ़ा है। 1950 के आँकड़ों पर नजर डालें तो ज्ञात होगा कि प्राइमरी स्तर पर 7 गुना एनरोलमेंट अपर प्राइमरी में 22 गुना का इजाफा हुआ है। वर्ष 1951 में प्राइमरी में 1.9

करोड़ अपर प्राइमरी में 30 लाख सेकण्ड्री में 15 लाख छात्रों ने प्रवेश लिया जबकि वर्ष 2015 में यह आँकड़ा इस प्रकार रहा 13 करोड़, 6.71 करोड़ व 6.18 करोड़। और 20 गुना प्रवेश छात्राओं का बढ़ा। (education @dbcorp.in) इसी प्रकार उच्च शिक्षा में भी सकल नामांकन दर बढ़ा है। भारत सरकार का लक्ष्य वर्ष-2020 तक वर्तमान सकल नामांकन दर जो 19 प्रतिशत है को 30 प्रतिशत तक करना है। उल्लेखनीय यह है कि विश्व स्तर पर यह 27 प्रतिशत है। शिक्षण संस्थाओं में संख्यात्मक वृद्धि हुई है। डेलोईटी भारत (Deloiltee India) के अनुसार-भारत में प्रति एक लाख जनसंख्या पर 23 महाविद्यालय हैं। उपरोक्त विवरण भारत में प्राथमिक, माध्यमिक व उच्च शिक्षा में संख्यात्मक वृद्धि को दर्शाता है। परंतु देश के बौद्धिक स्तर का मूल्यांकन वहाँ के शिक्षकों का देश के समग्र विकास के परिप्रेक्ष्य में होता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि विद्यार्थियों का राष्ट्र के समग्र विकास में योगदान ही शिक्षक के योगदान का अप्रत्यक्ष मूल्यांकन होता है। अत: प्रश्न यह उठता है कि बालकों के सामाजिक व पारिवारिक परिप्रेक्ष्य में यह आवश्यक हो जाता है कि उसका अधिगम स्तर क्या है ? वार्षिक स्कूल शिक्षा प्रतिवेदन के अनुसार पिछले दो वर्षों में स्कूलों में अधिगम का स्तर बढ़ा है लेकिन सरकारी स्कूल प्राइवेट से पीछे हैं। बड़े राज्यों में हालत ज्यादा खराब है। 15 राज्य ऐसे हैं, जहाँ आठवीं कक्षा के 70 प्रतिशत से ज्यादा छात्र दूसरी कक्षा की किताबें नहीं पढ़ सकते हैं। एक सर्वे रिपोर्ट के आधार पर देश के ग्रामीण क्षेत्रों में किताबें पढ़ सकने वाले छात्रों की संख्या में वृद्धि हुई है। वर्ष 2014 में तीसरी कक्षा के 23.6 प्रतिशत छात्र ही दूसरी कक्षा की किताबें पढ़ने में सक्षम थे। 2016 में यह आँकड़ा 25.2 प्रतिशत हो गया। हालांकि प्राइवेट स्कूलों की अपेक्षा सरकारी स्कूलों में दूसरी कक्षा की किताबें पढ़ सकने वाले छात्रों की संख्या काफी कम है।

सरकारी स्कूलों में ऐसे छात्रों की संख्या 19.3 प्रतिशत है, जबकि प्राइवेट स्कूलों में 38 प्रतिशत है। पाँचवीं और आठवीं कक्षा के छात्रों की स्थिति ज्यादा खराब है। 2010 में पाँचवीं कक्षा के करीब 53.7 प्रतिशत छात्र कक्षा दूसरी की किताबें पढ़ सकते थे, अब सिर्फ 47.8 प्रतिशत छात्र ही इसमें सक्षम हैं। यही हाल आठवीं कक्षा के छात्रों का है। देश में कुल 11 राज्य ऐसे हैं, जहाँ ग्रामीण छात्रों में पाँचवीं कक्षा के 50 प्रतिशत से भी कम छात्र दूसरी कक्षा की किताबें पढ़ सकते हैं। इसमें बिहार (42 प्रतिशत), झारखण्ड (36.4 प्रतिशत), मध्यप्रदेश (38.7 प्रतिशत) व उत्तर प्रदेश (43.2 प्रतिशत) शामिल हैं। वहीं 15 राज्य ऐसे हैं, जहाँ आठवीं कक्षा के 70 प्रतिशत यानि राष्ट्रीय औसत से भी कम छात्र दूसरी कक्षा की किताबें पढ़ने में सक्षम हैं। इसमें भी मध्यप्रदेश (64.3 प्रतिशत), उत्तरप्रदेश (67.9 प्रतिशत) व झारखण्ड (67.8 प्रतिशत) शामिल है। उपरोक्त आँकड़े सामान्य विषय की पुस्तकों से सम्बंधित हैं जैसे-भाषा विज्ञान व मानविकी विषय। गणित की बात की जाए तो ग्रामीण छात्रों में कक्षा तीसरी के सिर्फ 27.6 प्रतिशत छात्र घटाना-जोड़ना (Substraction) लिखने में सक्षम हैं, जबकि 2010 में करीब 36 प्रतिशत छात्र घटाना जोड़ना जानते थे। इसी प्रकार पाँचवीं कक्षा के 25.9 प्रतिशत और आठवीं कक्षा के 43.2 प्रतिशत छात्र ही भाग (division) कार्य कर सकते हैं। 2010 में यह आँकड़ा क्रमश: 36.2 प्रतिशत और 68.4 प्रतिशत था। गणित विषय में भी प्राइवेट स्कूलों की हालत सरकारी स्कूलों की अपेक्षा कहीं ज्यादा बेहतर है। सरकारी स्कूलों में तीसरी कक्षा के 20 प्रतिशत तो प्राइवेट स्कूलों में 44 प्रतिशत छात्र घटाना करने में सक्षम है। उपरोक्त विवरणों से अब यह आवश्यक हो जाता है कि न्यूनतम अधिगम स्तर क्या है? वर्तमान में देश में स्कूल शिक्षा में शिक्षा प्रदाता के रूप में केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (CBSE), भारतीय स्कूल प्रमाण पत्र परिषद्, खुला राष्ट्रीय विद्यालय संस्थान, इन्टरमीडिएट बोर्ड व ओपन स्कूल आदि हैं। बालक जन्म से ही सीखना प्रारम्भ कर देता है व यह प्रक्रिया आजीवन-अनवरत प्रवाहित होती रहती है। परंतु जब हम विद्यालय या शैक्षिक संस्था के वातावरण में कुछ निर्धारित पाठ्यक्रम के जरिए सीखने-सीखाने की बात करते हैं तो इस सीखने की प्रक्रिया को चिह्नित करना आवश्यक है। वास्तव में ये वे संकेतक (Indicator) हो सकते हैं। जिनके द्वारा बालक भाषा, विज्ञान, सामाजिक व मानविकी विषयों के साथ-साथ संस्कारों को भी ग्रहण कर सकता है। इसलिए भाषा संकेतकों को समझने के

दौरान सुनने-बोलने, पढ़ने-लिखने जैसे कौशलों को व्यापक नजरिये से समझना व अनुभव करना चाहिये और भाषायी कौशलों को यांत्रिकता के सीमित दायरों से बाहर निकलना चाहिये। तभी भाषिक विविधता बच्चों को सांकेतिक भाषा के साथ-साथ भाषा-अभिव्यक्ति का एक समावेशी (Inclusive) कक्षा में स्थान देना चाहिये तथा बालक पर सकारात्मक मनोवैज्ञानिक व सामाजिक प्रभाव होगा। बालक जब विद्यालय में प्रवेश करता है तब घर की भाषा और विद्यालय की भाषा के बीच एक द्वन्द्व चलता है इसलिए भाषाई ज्ञान एक आधारभूत व सुदृढ़ संकेतांक है-सीखने का। बालक पाठ्यचर्या, पाठयक्रम, पाठ्यसामग्री का अध्ययन कर सतत् और समग्र आकलन व मूल्यांकन के लिए तैयार रहेगा। शिक्षकों को बालकों के परिवेशीय वातावरण का भी संज्ञान लेना होगा। (NCERT, 2014, Learning Indicators and Learning out comes at Elementary Stage) भाषा के सन्दर्भ में न्यूनतम संकेतांक 9 कौशल है। जैसे-सुनना, बोलना, पढ़ना, लिखना, विचारों को समझने की शक्ति (Comprehension of ideas), प्रयोजनमूलक व्याकरण स्वय: सीखना, भाषा का प्रयोग व शब्दावली को माना गया है। इसी प्रकार गणित के विषय में दैनिक जीवन के उपयोग में प्रयुक्त मुद्रा की इकाई, जैसे-लम्बाई, भार, क्षेत्र, समय, क्षमता का ज्ञान व गणना, डेसिमल (दशमलव), प्रतिशत, अंश (fraction) आदि का ज्ञान सामान्य जोड़, बाकी, गुणा व भाग का उपयोग। ज्यामिति के ज्ञान के साथ-साथ गणित के सिद्धान्तों के प्रयोगों के माध्यम का ज्ञान, संकेतांक के रूप में न्यूनतम स्तर को इंगित करते हैं। तीव्र मेधा के विद्यार्थी के साथ-साथ प्रथम पीढ़ी के सीखने वाले (first generation learner) विद्यार्थियों पर विशेष ध्यान देना चाहिए ताकि वे सामान्य स्तर को प्राप्त कर सकें। यूनिसेफ द्वारा पोषित व राष्ट्रीय शिक्षा, शोध व प्रशिक्षण परिषद् द्वारा 1978 में प्रस्तावित प्रस्ताव ''समुदायिक शिक्षा, शिक्षा-पाठ्यक्रम व सहभागिता'' विषय पर आयोजित कार्यशाला में प्राथमिक स्तर पर न्यूनतम अधिगम स्तर निर्धारित करने पर विचार-विमर्श किया गया और समझने-सीखने व मूल्यांकन पर बल देते हुए तुलनात्मक व समानता स्तर को आधार माना गया।

आधारभूत क्षमता, योग्यता, कौशल एवं मापदण्ड संकेतांकों (indicators) के आधार पर अधिगम निर्धारित किया जाना चाहिये, जैसे-एक विद्यार्थी कला में रुचि रखता है, वह कक्षा में चित्र बनाता रहेगा व अन्य विषयों में कम रुचि दिखायेगा। यही संकेत उसकी कला में अभिरुचि दर्शाता है। अधिगम करके सीखना (learning by doing) आज भी प्रासंगिक है। इसलिए प्रयोगात्मक, अनुसंधान व प्रेक्षणात्मक संकेतों के आधार पर अधिगम स्तर का मापन होना चाहिये। भारी भरकम पाठ्यक्रम के कारण भी विद्यार्थी की अभिरुचि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। शिक्षक-विद्यार्थी के मध्य उभयमार्गीय संवाद होना चाहिये, तभी बालक के मस्तिष्क में उठने वाले प्रश्नों का समाधान संभव होता है, प्रश्नों को पूछने से जिज्ञासा का समाधान तो होता ही है। जब उसका उत्तर शिक्षक द्वारा मिलता है तब बालक अधिक रुचि से अध्ययन में मन लगाकर विषय-वस्तु को अंगीकार करने का प्रयास करता है। प्रश्न पूछना भी एक संकेत है इससे विद्यार्थी की मेधा परिष्कृत होगी। पाठ्यक्रमों की प्रत्येक ईकाइयों का तारतम्य होना चाहिये, तभी विद्यार्थी की अध्ययन रुचि विकसित होती है। प्रत्येक स्तर पर सतत् मूल्यांकन होने से विद्यार्थी की रुचि में वृद्धि होगी। अधिगम उद्देश्यों का वार्गिकी (taxonomic) विश्लेषण होना चाहिये। जैसे ज्ञान (knowledge), समझाने की शक्ति (comprehension), प्रयोग करने की कला (application) संयोजन (analysis) व मूल्यांकन (evaluation); इनके विश्लेषण के द्वारा विद्यार्थी में किस प्रकार की प्रतिभा है, उसका मूल्यांकन होने से विद्यार्थी की मेधा का परीक्षण हो सकता है। उपरोक्त न्यूनतम अधिगम स्तर का आधार होने से ही विद्यार्थी की मेधा व रुचि का मापन किया जा सकता है।

भारतीय विज्ञान कांग्रेस के 104 वें सम्मेलन में प्रधानमंत्री जी ने कहा था कि भारत को 2030 तक विज्ञान के क्षेत्र में विश्व के शीर्ष राष्ट्रों की श्रेणी में होना चाहिये। यह तभी सम्भव होगा जब प्राथमिक स्तर पर प्रायोगिक पद्धतियों का उपयोग कर बालकों में इनोवेशन व रचनात्मक दृष्टिकोण का विकास है। क्षमता-आधारित शिक्षण व अधिगम (competency-based teaching and learnign) के लिए तुलनात्मक स्तर (comparable standard) के आधार पर न्यूनतम अधिगम स्तर होने चाहिये, (आठवीं पंचवर्षीय योजना, 1989) वैसे-न्यूनतम अधिगम स्तर का निर्धारण, मापन व विश्लेषण करना सम्भव नहीं है क्योंकि वृहद् व सतत् मूल्यांकन के शत-प्रतिशत परिणाम प्राप्त करने या अच्छे परिणाम अर्जित करने के लिए विभिन्न प्रकार के कारकों का महत्त्व होता है। ये कारक प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से बालक की विकसित होती प्रतिभा, जिज्ञासा, कार्यशीलता, श्रमशीलता पर प्रभाव डालते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि बालकों में पाई जाने वाली प्रतिभा की खोज की जाये व उसे समय पर प्रोत्साहन (motivation) देकर उसे उत्कृष्टता व पूर्णता की ओर अग्रसर करने का प्रयास होने से एवं उसे समय पर पुरस्कृत करने पर वह प्रतिभा चरम पर पहुँच कर देश के सर्वांगीण विकास की भागीदार बनेगी। यही न्यूनतम अधिगम स्तर है। ❑

(विभागाध्यक्ष, पर्यावरण विज्ञान विभाग, सरगुजा वि.वि., अम्बिकापुर, छत्तीसगढ़)

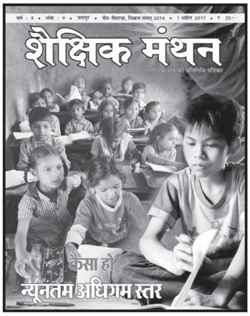

शिक्षा : परिसर का परिवेश

❑ एम.जे. वारसी

किसी भी देश का विकास उसकी शिक्षा नीति और आर्थिक प्रगति पर निर्भर करता है। हम बात करना चाहते हैं उस भारत की, जिसे कभी हमारे पूर्वजों ने अपने खून-पसीने से सींचा था, वह भारत जो कभी विश्व मानचित्र पर अपना एक अलग अस्तित्व रखता था, वह भारत जिसने कभी संसार को शिक्षा और संस्कृति का पाठ पढ़ाया था, वह भारत जिसने दुनिया को एक अच्छी जीवन-शैली अपनाने का सबक दिया था, वह भारत जिसने कभी विश्व को एक अच्छे और सशक्त समाज की स्थापना में योगदान दिया था। क्या हम आज भी उसी दिशा में आगे बढ़ रहे हैं? यह एक ऐसा प्रश्न है, जिसका उत्तर हम सबको मिल कर सोचना होगा।

शिक्षण संस्थानों में शिक्षा के स्तर की गिरावट राजनीतिक व्यवस्था के कारण है, जिसके कारण आज सड़कों पर क्षण भर में विद्रोह होने लगता है। सरकार चाहे किसी की हो, छात्रों का काम सवाल पूछना है, तर्क के साथ बहस करना है, अपनी बातों को सहजतापूर्वक दूसरों तक पहुँचाना है, संयम के साथ दूसरों की बातों को सुन कर अपनी राय देना है। दरअसल, यूनिवर्सिटी नई बहस, वाद-विवाद और संवाद का बहुत बड़ा मंच होती है। वाद-विवाद और संवाद ही छात्रों को जानकार बनाते हैं। फिर वहीं से एक नई बहस की शुरुआत होती है। हर परिसर में साफ-स्वस्थ राजनीति के लिए खुला शैक्षणिक और राजनीतिक माहौल होना ही चाहिए, ताकि गाँव, गरीब, किसान, दलित, आदिवासी, मुसलमान परिवारों के छात्रों को भी मुख्यधारा में सक्रिय रूप से अपना योगदान देने का मौका मिल सके।

किसी भी देश और समाज के विकास के लिए शिक्षा आवश्यक है। इसके बिना कोई भी तरक्की नहीं कर सकता। आज दुनिया के कई देशों में भारतवासियों ने शिक्षा की वजह से ही अपना स्थान बनाया है। अमेरिका सहित विभिन्न विकसित देशों में भारतवासियों ने अपनी मेहनत, क्षमता और ज्ञान के आधार पर अपने देश का परचम फहराया है। हाल के वर्षों में अगर दुनिया में एक मजबूत, प्रगतिशील और लोकतांत्रिक देश के रूप में हमारी छवि पुख्ता हुई है, तो इसमें कहीं न कहीं हमारे मजबूत शैक्षिक आधार का भी हाथ है। शिक्षा प्रगति, उत्पादन, विकास और स्वास्थ्य रक्षा का मुख्य आधार है।

आज विकास के जिस मॉडल पर काम हो रहा है, उसमें बदलाव लाने की जरूरत है। शिक्षा में ही भारत को विकसित देश बनाने की शक्ति निहित है। अतीत को भूल कर हमें आगे बढ़ने की जरूरत है। इसके लिए नई पीढ़ी को शिक्षा के लिए प्रोत्साहित करने की जरूरत है। शिक्षा से व्यक्तित्व का विकास होता है और छात्र जीवन विकास का सर्वश्रेष्ठ समय

किसी भी देश और समाज के विकास के लिए शिक्षा आवश्यक है। इसके बिना कोई भी तरक्की नहीं कर सकता। आज दुनिया के कई देशों में भारतवासियों ने शिक्षा की वजह से ही अपना स्थान बनाया है। अमेरिका सहित विभिन्न विकसित देशों में भारतवासियों ने अपनी मेहनत, क्षमता और ज्ञान के आधार पर अपने देश का परचम फहराया है। हाल के वर्षों में अगर दुनिया में एक मजबूत, प्रगतिशील और लोकतांत्रिक देश के रूप में हमारी छवि पुख्ता हुई है, तो इसमें कहीं न कहीं हमारे मजबूत शैक्षिक आधार का भी हाथ है। शिक्षा प्रगति, उत्पादन, विकास और स्वास्थ्य रक्षा का मुख्य आधार है।

है। समय का सदुपयोग ही आगे बढ़ने का मार्ग प्रशस्त करता है। इसलिए शिक्षा के साथ हमारा भावात्मक विकास होना जरूरी है। भारत ऐतिहासिक दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण देश है। यहाँ विकास की काफी संभावनाएँ हैं। यह भी एक हकीकत है कि किसी भी जीवित समाज में बदलाव आना स्वाभाविक है और शायद यही सोच हमें आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करती है।

सूचना प्रौद्योगिकी के युग में तीव्रता से संपूर्ण विश्व एक वैश्वीकृत ग्राम का रूप धारण कर चुका है। इन बदलती परिस्थितियों ने मानव समाज के सम्मुख अनेक चुनौतियाँ उत्पन्न की है। हमारा समाज भी इन चुनौतियों से अछूता नहीं है। भूमंडलीकरण के वर्तमान परिदृश्य में हमारे सामाजिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मूल्यों और मान्यताओं में अभूतपूर्व परिवर्तन हो रहा है। परंपरागत मूल्यों और मान्यताओं में परिवर्तन का प्रभाव शिक्षा, खासकर उच्च शिक्षा पर पड़ा है। शिक्षा मानव व्यक्तित्व के निर्माण में विनियोजन है और व्यक्ति के माध्यम से समाज और राष्ट्र के निर्माण तथा विकास की आधारशिला रखी जाती है। सर्वमान्य सत्य है कि ज्ञान-विज्ञान और वैश्वीकरण के इस दौर में एक शक्तिशाली और विकसित भारत के निर्माण में सर्वाधिक निर्णायक भूमिका शिक्षा जगत की होगी।

आज हमारे सामने नारायण मूर्ति का उदाहरण मौजूद है। एक सौ बीस रुपए के वेतन से नौकरी की शुरुआत करने वाले नारायण मूर्ति आज दुनिया की सबसे बड़ी कंपनी इन्फोसिस का मालिक बन कर ढाई लाख लोगों को रोजगार दे रहे हैं। शिक्षा से ही इंसान असत्य से सत्य की ओर और अंधकार से प्रकाश की ओर बढ़ पाता है। आधुनिक ज्ञान-विज्ञान की सहायता से सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक असंतुलन को कम करने के प्रयास करने होंगे। शासन का प्रयास होना चहिए कि बदलते परिवेश में समाज का संतुलित विकास और उसके विभिन्न अंगों के मध्य पारस्परिक सामंजस्य की स्थिति सुनिश्चित करने के लिए शैक्षिक संस्थाओं के गुणात्मक विकास पर बल दिया जाय, ताकि विकसित राज्य के निर्माण के बेहतर लक्ष्य की प्राप्ति हो सके।

भारत में युवाओं को तकनीकी शिक्षा में विशेष रुचि लेनी होगी। विज्ञान की प्रगति का प्रभाव अब गाँव में भी ले जाने की आवश्यकता है, ताकि किसान खेत में बैठा महानगर में हो रहे कृषि अनुसंधान की जानकारी मोबाइल से ले सके और पंचायत में लगे इंटरनेट से अपनी खाते की नकल प्राप्त कर सके, ताकि एक सच्चे और वास्तविक भारत की कल्पना जो हमारे दिलो-दिमाग में है उसकी सही तस्वीर सामने आ सके। समय के साथ तकनीक और संसाधन जरूर बदले हैं, पर सभी का मुख्य उद्देश्य अपने देश और समाज का विकास करना होता है। भारत अध्ययनशील समाज के रूप में मानव संसाधन के क्षेत्र में एक शक्तिशाली देश बन चुका है।

देश के चहुँमुखी और नियोजित विकास में शिक्षा का अत्यंत महत्त्वपूर्ण और विशिष्ट स्थान है। शिक्षा का विकास वर्तमान में विद्यमान आवश्यकताओं और भविष्य की संभावनाओं, सामाजिक अपेक्षाओं के आलोक में किया जाता है। आज शिक्षा मात्र सीखने और जानने का उपक्रम या मनुष्य के मानसिक और बौद्धिक धरातल पर होने वाली जानकारियों-सूचनाओं के आदान-प्रदान तक सीमित नहीं है, बल्कि सुयोग्य, सुसंस्कृत और उत्कृष्ट चरित्रवान प्रबुद्ध पीढ़ियों का निर्माण भी शिक्षा का प्रमुख दायित्व है। एक उज्ज्वल और विकसित भारत के लिए शहरों और देहातों के बीच शिक्षा संसाधन असंतुलित और शिक्षा प्राप्ति की स्थिति की असमानता को दूर कर शिक्षा गुणवत्ता के सुधार और प्रतिभाओं की मूल्यांकन प्रणाली बनाने और शहरों तथा देहातों में सार्वजनिक शिक्षा सेवा व्यवस्था कायम करने के उपाय प्रस्तुत करने होंगे।

शिक्षा व्यक्तित्व के विकास का मार्ग प्रशस्त करती है। स्कूल, विद्यालय या महाविद्यालय का मतलब सिर्फ क्लासरूम नहीं होता। यह वही मंच होता है, जहाँ एक हिंदू मुसलमान लड़के के साथ मिल कर ठहाका लगा सकता है या एक सवर्ण दलित के साथ कैंटीन में बैठ कर चाय पी सकता है। इससे उनके पूर्वाग्रह टूटते हैं। लड़कियों को तो इन विद्यालयों ने ही बाहरी दुनिया का दरवाजा दिखाया है। हम ऐसा ही संपन्न और सुसज्जित भारत देखना चाहते हैं। आज के संदर्भ में शिक्षा के महत्त्व को समझने की आवश्यकता है।❑

वोकेशनल सबजेक्ट चुना तो, फेल होने पर मिलेगा एक और मौका

सीबीएसई की दसवीं बोर्ड परीक्षा में अगर आपने वोकेशनल सबजेक्ट चुना है तो, बोर्ड परीक्षा में फेल होने पर अब आपको एक और मौका मिलेगा। इसके लिए बोर्ड ने हाल ही में नया सर्कुलर जारी किया है। सर्कुलर के अनुसार अगर कोई स्टूडेंट छठवाँ सबजेक्ट चुनता है तो दूसरे पाँच विषयों में से किसी एक में फेल होने पर ऑप्शनल सबजेक्ट से उसे रिप्लेस करने का ऑप्शन उसे मिलेगा। पहले समझा जा रहा था कि 10वीं में वोकेशनल सबजेक्ट को अनिवार्य रूप से शामिल किया जा रहा है और इसके अंक 10वीं बोर्ड एग्जाम में जुड़ेंगे, यानी लैंग्वेज-1, लैंग्वेज-2, साईंस मैथ्स और सोशल साइंस के अलावा वोकेशनल छठवाँ अनिवार्य विषय होगा, लेकिन ऐसा नहीं है।

वोकेशनल सबजेक्ट चुनना सभी स्टूडेंट्स के लिए अनिवार्य नहीं है, बल्कि यह एडिशनल सबजेक्ट है। सर्कुलर के अनुसार स्टूडेंट्स लैंग्वेज-2, मैथ्स, साईंस, सोशल साइंस पढेंगे और सिर्फ इन पाँचों विषयों के अलावा एक प्रोफेशनल विषय अनिवार्य रूप से पढ़ेंगे। यानी छठवाँ विषय वोकेशनल स्कीम के लिए अनिवार्य होगा।

भारत में शिक्षा के क्षेत्र की उपेक्षा की गई। शिक्षा का व्यावसायीकरण हआ। शिक्षा अधिक से अधिक धनोपार्जन का माध्यम बन गई। बेकारी, बेरोजगारी रोकने के लिए सतत् प्रतियोगी परीक्षाओं की बाढ़ तो आ गई लेकिन बच्चों की नींव यानी प्राथमिक शिक्षा ही कमजोर हो तो इमारत कैसे बुलंद हो सकती है। बेहतर स्कूली शिक्षा के मूल में एक विचार है कि कोई भी बच्चा सीखने के मामले में पीछे नहीं छूटना चाहिए लेकिन एक शिक्षक कितना पढ़ा सकता है, जहाँ सुविधाएँ न के बराबर हों। आज के समय में ऐसे स्कूल बच्चों के लिए क्या कर पाएँगे? यदि समय रहते मूल प्रश्नों पर विचार नहीं किया गया तो हालात और बिगड़ जाएँगे।

नींव ही कमजोर है

❑ अश्विनी कुमार

साक्षरता और शिक्षा के मामले में भारत की गिनती दुनिया के पिछड़े देशों में होती है। हम तो चीन, म्यांमार, श्रीलंका, ईरान से भी पीछे हैं। हालांकि मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का वादा संविधान में किया गया है। इसे दस वर्ष में पूरा करने का लक्ष्य भी तय किया गया था लेकिन वह पूरा नहीं हो सका। धन की कमी आड़े आ गई। राष्ट्रीय स्तर पर भी कोई ठोस योजना की शुरुआत नहीं हो सकी। राज्यों के स्तर पर अलग-अलग प्रयास शुरू किए गए लेकिन निर्धारित लक्ष्य को पूरा नहीं किया जा सका।

शिक्षा, राज्यों का विषय है लेकिन यह कम शर्म की बात नहीं कि राज्यों ने अपना दायित्व ठीक ढंग से नहीं सम्भाला। आज भारत के 6 राज्यों के दो-तिहाई बच्चे स्कूल नहीं जाते। यह राज्य हैं आंध्र प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल। इन राज्यों को जिन समस्याओं ने जकड़ा हुआ है वह हैं उनका इतिहास। बीमार राज्यों में कई सार्वजनिक समस्याएँ हैं जो अपने साथ राज्य की शिक्षा योजना को भी दूषित कर रही हैं। आजादी के 70 वर्षों बाद भी यह आँकड़ा चौंकाने वाला है कि देशभर में एक लाख स्कूलों में केवल एक ही शिक्षक है। समाचारपत्रों में प्रकाशित रिपोर्टों को देख हैरानी होती है। बिहार की राजधानी पटना से 50 किलोमीटर दूर बेचूटोला का एक प्राथमिक स्कूल एक ही कमरे में चलता है। एक ही हैडमास्टर, वही शिक्षक और वही स्टाफ। एक ही कमरे में चलने वाले स्कूल में 80 बच्चे हैं जो पहली से लेकर पाँचवीं तक की शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार भले ही यह कहें कि उनकी सरकार वार्षिक बजट का 20 प्रतिशत शिक्षा पर खर्च कर रही है, इसके बावजूद स्कूलों में बच्चों की हाजिरी बहुत कम है।

इसी तरह मध्य प्रदेश की राजधानी भोपाल में भी एक ऐसा स्कूल चल रहा है, जिसमें एक ही शिक्षक है। एक कमरे में चल रहे स्कूल में दो दर्जन से ज्यादा बच्चे हैं जो

पहली से पाँचवीं तक की पढ़ाई कर रहे हैं। एकमात्र शिक्षक 'एक दिन एक विषय' पर चलकर बच्चों को पढ़ाते हैं जैसे सोमवार को गणित, मंगलवार को अंग्रेजी और बुधवार को हिन्दी और गुरुवार को विज्ञान और अगले दिन कुछ और विषय। इससे पता चलता है कि देश में प्राथमिक शिक्षा का ढाँचा कितना ध्वस्त हो चुका है। आँकड़ों की मानें तो देशभर में 97,923 स्कूल हैं, जिनमें एक ही शिक्षक है। शिक्षा पर एकीकृत जिला सूचना प्रणाली के तहत जुटाए गए आँकड़ों के अनुसार मध्य प्रदेश में ऐसे स्कूलों की संख्या 18,170 है। उत्तर प्रदेश में ऐसे स्कूलों की संख्या 15669, राजस्थान में 12,029 है। शिक्षा के अधिकार के तहत दिशा-निर्देशों के मुताबिक सरकारी और प्राइवेट स्कूलों में 30-35 छात्रों पर एक शिक्षक होना चाहिए लेकिन उपलब्ध आँकड़े से प्राथमिक शिक्षा तंत्र की तस्वीर काफी बदरंग नजर आती है। एकल शिक्षक स्कूलों की शुरुआत बच्चों की शिक्षा जरूरतों को देखते हुए शुरू की गई थी लेकिन बुनियादी सुविधाओं के अभाव में ऐसे स्कूल प्रभावहीन हो चुके हैं। सरकारी स्कूल गरीबों और अशिक्षितों के बच्चों का सहारा बन गए हैं। इन स्कूलों में स्थापित मानकों, पाठ्यपुस्तकों की गुणवत्ता और प्रासंगिकता न होने के चलते बच्चे ऐसे स्कूलों से दूर होते गए। 90 प्रतिशत से ज्यादा सार्वजनिक धन का खर्च स्कूलों के अध्यापकों के वेतन और प्रशासन पर खर्च होता है। दुनियाभर में बिना अनुमति अवकाश लेने वाले अध्यापकों की संख्या भारत में अधिक है। स्कूलों में अध्यापक आते ही नहीं और चार में से एक सरकारी स्कूल में रोज कोई न कोई अध्यापक छुट्टी पर होता है।

प्राथमिक स्कूलों की शिक्षा सुधारने के लिए बना तंत्र भी लगभग पूरी तरह ठप्प हो चुका है। किसी का किसी पर नियंत्रण ही नहीं। सरकारी प्राथमिक स्कूलों की इस दशा को सुधारने के लिए इलाहाबाद हाईकोर्ट ने पिछले वर्ष आदेश दिया था कि सभी सरकारी अधिकारियों, निर्वाचित प्रतिनिधियों और न्यायिक कार्य से जुड़े अधिकारियों के लिए यह अनिवार्य कर दिया जाए कि वे अपने बच्चों को पढने़ के लिए इन्हीं स्कूलों में भेजें। अगर वे ऐसा नहीं करते तो उनके वेतन से निजी कान्वेंट स्कूल की फीस के बराबर धन राशि काट ली जाए और उसे सरकारी स्कूलों की दशा सुधारने में खर्च किया जाए।

भारत में शिक्षा के क्षेत्र की उपेक्षा की गई। शिक्षा का व्यावसायीकरण हआ। शिक्षा अधिक से अधिक धनोपार्जन का माध्यम बन गई। बेकारी, बेरोजगारी रोकने के लिए सतत् प्रतियोगी परीक्षाओं की बाढ़ तो आ गई लेकिन बच्चों की नींव यानी प्राथमिक शिक्षा ही कमजोर हो तो इमारत कैसे बुलंद हो सकती है। बेहतर स्कूली शिक्षा के मूल में एक विचार है कि कोई भी बच्चा सीखने के मामले में पीछे नहीं छूटना चाहिए लेकिन एक शिक्षक कितना पढ़ा सकता है, जहाँ सुविधाएँ न के बराबर हों। आज के समय में ऐसे स्कूल बच्चों के लिए क्या कर पाएँगे? यदि समय रहते मूल प्रश्नों पर विचार नहीं किया गया तो हालात और बिगड़ जाएँगे। बच्चों को स्कूलों की तरफ आकर्षित करने के लिए बहुत कुछ किया जाना शेष है। केन्द्र सरकार सर्व शिक्षा अभियान और राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान के तहत राज्य सरकारों को वित्तीय सहायता प्रदान करती है लेकिन हालात नहीं बदल रहे। राज्य सरकारों को नए सिरे से सोचना होगा। ❑

(स्तम्भकार, पंजाब केसरी)

There had been various discussions in our nation as well as abroad about what should be the minimum level of education in the society. There is already a tendency to agree to the point that at least one should study till class ten. But then, what should be the things getting taught? Ideally, it should be possible for one with class ten completions to independently existing meaningfully. Minimum level of education must be thinking in directions those can make one totally independent with whatever given minimum level, be it class ten, or class eight.

M.L.L. and Some Thoughts

❑ Dr. TS Girishkumar

My youngest son, when he was in class five asked me a question, "why should I study at all?" His logic was that, he studied from nursery to class four, and wrote all kinds of examinations to pass to the next class. He studies, remembers and writes examinations, but at any point in time, he doesn't remember anything whatever he had studied. He says that "I don't remember anything whatever I studied till the previous year, and this is going to repeat on and on. So why should one study at all?" He was sitting behind my bike, and I stopped the bike at once, and stood to strike a conversation with him. Perhaps I could convince him that whatever he studies is not to keep in memory for ever, they are simply a process and part of training his brain and developing his mind, to make it sharp and independently grasping things whenever he wishes so in future.

Brain training and mind developing

Indeed I was perplexed at the question of a class five student: it is my son: and I had to quickly think of giving him a convincing answer. Even without the theory of Freud we know that for a son at that age father is a tall figure and an ultimate authority. So I discussed about training of brain, through the example of sharp razor, as the more the blade is put to use, the more it remains sharp. Perhaps I could convince him that the classes, examination and study material etc. are all aimed at sharpening both brain and mind, for, he never asked me such questions again.

As a matter of fact, education is to be such a training activity through various patterns of curriculum. I don't

think that I ever used that algebra I studied with such hardship and paper work anywhere in my life even once. Still I believe that they must have helped somewhere in making some differences to me. Such may be the case with training of and sharpening of the brain of a growing child.

Minimum requirement of education

In all practical aspects, education in Bharatiya society shall be multi-tasking. On the one hand we have to pace with the world in their empirical methodologies and at the same time we also have to build knowledge system for our spiritual and Sanskritic aspect. Without these two things at work simultaneously, education in Bharat shall be bound to be incomplete. Therefore, any discussion about education in Bharat must include both these aspects.

There had been various discussions in our nation as well as abroad about what should be the minimum level of education in the society. There is already a tendency to agree to the point that at least one should study till class ten. But then, what should be the things getting taught? Ideally, it should be possible for one with class ten completions to independently existing meaningfully. Minimum level of education must be thinking in directions those can make one totally independent with whatever given minimum level, be it class ten, or class eight.

This has to be a serious matter of planning and execution. At the moment, school education is not aimed at making school graduates independent and functionally autonomous; it is simply catering to the requirements and need for higher education further. It is here that one has to focus and concentrate. Perhaps we can think of post class eight periods as catering to higher education period, and this shall make the task of classes up to eight teaching very tricky.

The curriculum and teaching up to class eight ought to be carefully programmed. There should be a distinction made between necessary teaching and sufficient teaching; the necessary in the direction of making one autonomous, and the sufficient aspect in the direction of sending one ahead for higher education.

There should be results as well. A class ten graduate should be in a position of being autonomous; it must be possible for him to do any desired task without difficulties. Until recent times, the basic educational qualification for flying pilots was class ten. We, in Bharatiya Vayu Sena for example had produced excellent pilots with basic class ten qualifications in the past. It is also not possible for us to claim that science graduates of today can do better than the veterans. Perhaps it may be the case that they studied in better schools, and it is here that I wish to say, why can't we make our village schools better schools which can produce autonomous school graduates?

Let us accept the fact that higher education need not be a routine. Higher education ought to be an option for those who desire for such things. For normal living, the autonomy received from school should be more than sufficient.

Insufficient minimum level of education

These are bad tendencies present in our society, and such things happen because of an insufficient minimum level of education. Why should one study medicine Engineering or any professional higher education course for that matter to become a civil service officer? Like in the case of flying pilots of the old, it must be possible for class ten graduates to write any competitive examination, so that when they qualify, they could be trained in the desired area. Why should the nation waste resources and time of youngsters? We should not be testing their knowledge level in competitive examinations, we should be testing their potential capabilities to the desired profession and then train them.

The Army is the best example, undoubtedly, let us learn from the Army.

To sum up, let us keep the minimum level of education the 'real minimum' but do the maximum to make individuals really autonomous. The minimum level, class eight or ten, should be so programmed that it should make both sense and impact: it should be possible for him to be autonomous. Administrative will and careful planning shall be needed to make the village school what they call a 'smart school', it may be difficult, but certainly not impossible. Last but not the least, this is Bharatiya society, and anything one does should be in accordance with Bharatiya Sanskriti, to protect, preserve and promote. ❑

(Professor of Philosophy, The Maharaja Sayajirao University of Baroda)

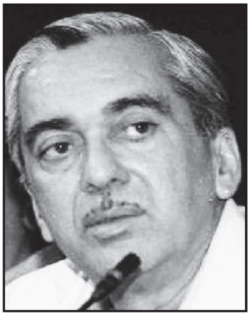

पाँचों राज्यों में नई सरकारें क्या नया विचार तथा दृष्टिकोण भी ला पाएँगी और क्या वे उसे क्रियान्वित कर पाएँगी? सबसे बड़ा प्रश्न तो मुख्यमंत्री और हर मंत्री की व्यक्तिगत ईमानदारी से जुड़ा होगा। इसके जो मापदंड नरेंद्र मोदी ने व्यक्तिगत उदाहरण द्वारा देश के सामने रख दिए उनसे कम स्वीकार करने को लोग अब तैयार नहीं। कम से कम अब भाजपा शासित राज्यों में सब को मोदी जैसा मुख्यमंत्री चाहिए। मुख्यमंत्रियों की जिम्मेदारी न केवल अपने प्रति होगी, वरन अपने मंत्रियों और अधिकारियों के प्रति भी होगी। लोगों की अपेक्षाएँ कितनी मर्मस्पर्शी होती हैं इसे तो गाँवों में जाकर ही समझा, जाना और पहचाना जा सकता है।

कुछ नया सोचें नई सरकारें

❑ जगमोहन सिंह राजपूत

पाँच राज्यों के चुनाव परिणाम आने के बाद वहाँ नई सरकारों का भी गठन हो गया। चुनाव के पहले कितने ही सुहावने वादे किए जाते हैं, आशाएँ जगाई जाती हैं और इस सारी प्रक्रिया में जितना समय, ऊर्जा, धन और अन्य संसाधन लगते हैं उसका अब सभी को अनुमान है। जो दिखाई देता है वह भी और जो छुपकर होता है उसे भी लोग जानते हैं। चुनाव जीतने के बाद प्राय: जीता हुआ प्रत्याशी परिवार सेवा और स्वजन सेवा में लग जाता है और हारे हुए गायब हो जाते हैं। मतदाता सब कुछ भली-भांति जानते हुए भी हर चुनाव में परिवर्तन की आशा फिर से संजोता है। अपने हर नए जन प्रतिनिधि से यह अपेक्षा करता है कि वह जन सेवा को प्राथमिकता देगा, लोगों की पहुँच उस तक बनी रहेगी और उस पर कदाचरण का कोई आरोप नहीं लगेगा। पिछली सदी के पाँचवें और छठे दशक में अधिकांश जनप्रतिनिधि इन सामान्य अपेक्षाओं पर प्राय: खरे उतरते थे। आज स्थिति उलट है। पाँच साल बाद जो आँकड़े सामने आते हैं वे चुने हुए जनप्रतिनिधियों की आय या संपत्ति में दो सौ से पाँच सौ गुने तक की वृद्धि को उजागर करते हैं। अभी तक तो अनुभव यही रहा है कि अधिकांश चुने हुए प्रतिनिधियों का अपने मतदाताओं से संबंध लगभग नगण्य हो जाता है। हालांकि इस ओर संचार माध्यमों ने अधिक ध्यान देना बंद कर दिया है। जिस ढंग से और जिस सीमा तक तमाम धुरंधर नेताओं ने विमुद्रीकरण के प्रभाव को समझाने में भूल की वह यही दर्शाता है कि जब कोई दल लोगों से विशेषकर सामान्य लोगों से कट जाता है तब प्रबुद्ध और अनुभवी मतदाता उसे कितने शांतिपूर्ण ढँग से सत्ता के गलियारों से उठाकर बाहर फेंक देता है।

जिन डॉ. मनमोहन सिंह को देश ने महान अर्थशास्त्री के रूप में सराहा और दस वर्ष प्रधानमंत्री के रूप में सहा उन्होंने संसद में विमुद्रीकरण पर जो 'भयानक' बयान दिया उसकी धज्जियाँ उत्तर प्रदेश के अनपढ़ ग्रामीणों ने 11 मार्च 2017 के चुनाव परिणामों से उड़ा दीं। जो देश की वास्तविक स्थिति से दूर हो चुके हैं उनसे आर्थिक, सामाजिक एवं अन्य बड़ी समस्याओं के समाधान की आशा में सात दशक निकल गए और अभी तक भुखमरी एवं कुपोषण तक से यह देश आजाद नहीं हो सका है। अनेक सामान्य और छोटी समस्याओं का समाधान भी आज तक खोजा नहीं जा सका है। उज्ज्वला योजना ने भारत के हर गाँव और कस्बे में आशा की ज्योति जगाई है। यह

एक साहसपूर्ण नवाचार है। उत्तर प्रदेश के गाँवों में जाकर पता लगा कि पिछली सरकार नहीं चाहती थी कि यह योजना सफल हो। उसे चुनाव जीतना था। ऐसे में केंद्रीय सरकार की हर योजना को असफल करना उसका अलिखित उद्देश्य बन गया। लोगों ने इस मंशा को समझा और ऐसा करने वालों को धूल चटा दी। अगर गैस का सिलिंडर कुछ घरों में जा सका तो उसके लिए वहाँ लोगों को धनराशि देनी पड़ी, जबकि वह नि:शुल्क था। इस एक उदाहरण से मूल समस्या उजागर होती है कि प्रशासन कैसे व्यक्तियों के हाथों में है? आखिर अधिकारी प्रेरणा और निर्देश कहाँ से लेते हैं? जनप्रतिनिधियों में ईमानदारी की साख कितनी बची है? एक वाक्य में कहा जाए तो सबसे अधिक विचारणीय प्रश्न तो भविष्य की पीढ़ी को तैयार करने का ही है। ऐसे युवा तैयार करने का जो चरित्र, कर्मठता, सेवाभावना और ईमानदारी से ओतप्रोत हों। जो देश इसमें कमजोर हो जाता है उसकी विकास की सारी प्रक्रिया सही रास्ते पर आ ही नहीं पाती है। उसके अपने लोग ही उसे पथभ्रष्ट करने में पीछे नहीं रहते हैं। नोबेल पुरस्कार से सम्मानित प्रसिद्ध समाजशास्त्री गुन्नार मिर्डल ने आज से लगभग पचास साल पहले अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'एशियन ड्रामा' में कहा था कि विकासशील देशों के लिए ऊर्जा का स्रोत है 'शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय'। यदि शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान गतिशीलता एवं भविष्य दृष्टि के साथ अपने कार्यक्रम निर्मित करें, शिक्षा की गुणवत्ता और कौशल की प्रवीणता में अपना-अपना अग्रणी स्थान बनाएँ और समग्र व्यक्तित्व विकास का उदाहरण प्रशिक्षुओं के समक्ष रखें तो उसका प्रभाव हर भावी अध्यापक पर पड़ेगा। वह गुणवत्ता और अपने आचरण के महत्त्व को समझेगा, उसे जीवन में उतारेगा एवं स्कूलों में जाकर अपना प्रभाव हजारों छात्रों पर स्वत: ही छोड़ेगा।

पाँचों राज्यों में नई सरकारें क्या नया विचार तथा दृष्टिकोण भी ला पाएँगी और क्या वे उसे क्रियान्वित कर पाएँगी? सबसे बड़ा प्रश्न तो मुख्यमंत्री और हर मंत्री की व्यक्तिगत ईमानदारी से जुड़ा होगा। इसके जो मापदंड नरेंद्र मोदी ने व्यक्तिगत उदाहरण द्वारा देश के सामने रख दिए उनसे कम स्वीकार करने को लोग अब तैयार नहीं। कम से कम अब भाजपा शासित राज्यों में सब को मोदी जैसा मुख्यमंत्री चाहिए। मुख्यमंत्रियों की जिम्मेदारी न केवल अपने प्रति होगी, वरन अपने मंत्रियों और अधिकारियों के प्रति भी होगी। लोगों की अपेक्षाएँ कितनी मर्मस्पर्शी होती हैं इसे तो गाँवों में जाकर ही समझा, जाना और पहचाना जा सकता है। उत्तर प्रदेश में लोगों को बड़ी आशाएँ हैं कि 'मोदी की सरकार' के बाद पुलिस और कचहरी में वसूली खत्म हो जाएगी, बिजली के टूटे खंभों को खड़ा करने के लिए गाँववालों को चंदा करके नजराना नहीं देना होगा और उससे भी बड़ी बात बिजली आएगी और रोज आएगी। अस्पतालों में डॉक्टर और दवाई मिलेगी, सूखा राहत का पैसा, जिसका पता ही नहीं चलता है कि कहाँ गया, ढूँढ़ा जाएगा और लोगों को दिया जाएगा। गन्ना किसानों के साथ लगातार होता रहा अन्याय बंद होगा। उत्तर प्रदेश में सरकारी शिक्षा अब केवल भ्रष्टाचार का पर्याय मात्र बनकर रह गई है। कुछ बच्चों को लैपटॉप बाँटने से शिक्षा नहीं सुधर जाती है। सामंतशाही की प्रवृत्तियाँ समाप्त होनी ही चाहिए। हर बच्चे को उसके नैसर्गिक अधिकार मिलने ही चाहिए। इनमें शिक्षा, स्वास्थ्य और सुरक्षा सबसे पहले आते हैं। उत्तर प्रदेश के युवाओं ने नया इतिहास रचा है। उन्होंने जाति-धर्म से ऊपर उठकर अपनी समझ के आधार पर मतदान किया है। यह प्रजातांत्रिक मूल्यों की पुन: प्रतिष्ठापना की दिशा में मील का पत्थर सिद्ध हो सकता है, यदि नई सरकार अपने उत्तरदायित्व का निष्ठा से निर्वाह करने में समर्थ हो सके। जातिगत आधार पर की गई अनगिनत नियुक्तियों को परिवर्तित करना ही होगा। सरकारी भर्तियों में लेन-देन बंद करना होगा और लोगों को इस पर विश्वास में लेना होगा। सभी के बच्चों को अच्छी शिक्षा देने की सर्वोपरि अपेक्षा को पूरा करने की तैयारी सभी नई सरकारों को युद्ध-स्तर पर करनी चाहिए। ❑

(लेखक एनसीईआरटी के पूर्व निदेशक हैं)

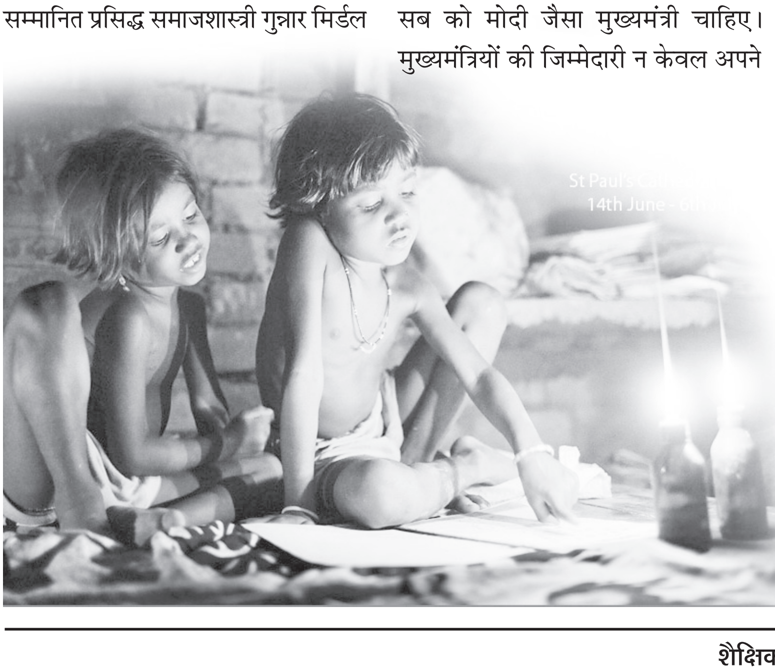

कुछ लोगों का मानना था कि वे सवर्णों और ब्राह्मणों के विरोधी थे, लेकिन उनके जीवन में एक बार भी ऐसा मत नहीं आया कि उन्होंने किसी भी एक वर्ग विशेष के लिए कुछ भी बुरा बोला हो। वे कुछ व्यवस्थाओं को लेकर संघर्ष कर रहे थे। उनका संघर्ष कुछ मान्यताओं से था। उनका संघर्ष उच्च जातियों के लोगों से नहीं था। उनका जीवन संघर्षमय था। लेकिन उनका कोई शत्रु नहीं था। वे संघर्ष करते थे, लेकिन किसी को शत्रु नहीं बनाते थे। वे दलितों से कहते थे कि बड़े-बड़े नेताओं से, बड़ी पार्टियों से, बड़े चुनावी उद्धारकों से तुम्हारा उद्धार नहीं होने वाला। अपना उद्धार स्वयं करने का प्रयत्न करो, अध्ययन करो, संगठित हो जाओ, आचरण ठीक रखो, जीवन में सुधार लाओ, किसी के भरोसे मत रहो, कोई दूसरा व्यक्ति आकर तुम्हारा उद्धार करने वाला नहीं है।

जन्मदिन पर विशेष

देश सर्वोपरि – बाबा साहेब

❑ बजरंग प्रसाद मजेजी

14 अप्रेल 1891 को महार जाति में जन्में बालक के बारे में उनके माता-पिता ने कभी नहीं सोचा होगा कि इतनी पिछड़ी जाति में जन्म लेने वाला यह बालक अपने देश का नाम दुनिया के नक्शे में चमकते हुए सूर्य की स्वर्णिम लालिमा से अंकित करेगा। निडर, निर्भीक एवं निष्ठावान बाबा साहेब का जीवन सदैव सामाजिक उत्थान के संघर्ष में बीता। वे हमेशा बराबरी के अधिकार में जीने के हिमायती थे। 'जिओ और जीने दो' में विश्वास रखने वाले डॉ. भीमराव अम्बेडकर सदैव संघर्षशील रहे। कर्त्तव्यपरायणता, ईमानदारी, मेहनत, लगन व अथाह ज्ञान का सागर समेटे डॉ. अम्बेडकर को 'बाबा साहेब' की सम्मान जनक उपाधि से नवाजा गया है। भारतीय समाज की प्रमुख बुराइयों में से एक जातिवाद और उससे उत्पन्न हुए छूआछूत, दमन, भेदभाव पर उन्होंने विशेष ध्यान दिया और इस बुराई से प्रभावित वंचित, शोषित अशिक्षित, दलित समाज को उबारने का प्रयास किया। लेकिन साथ ही साथ सामाजिक समरसता, सामाजिक न्याय, हिन्दू धर्म में जागरण एवं सुधार आदि अनेक ऐसे विषय थे जिन पर उन्होंने विशेष ध्यान दिया। डॉ. अम्बेडकर के लिए व्यक्ति का स्थान सर्वोपरि था। समाज और राज्य उनके लिए गौण थे। वे व्यक्ति के अधिकार, उनकी नैतिकता और वैधानिक क्रियाकलापों को राज्य के अधिनायकवादी अधिकारों से तथा समाज की त्रुटिपूर्ण संरचना से सुरक्षित रखना चाहते थे। मानव समाज को सामाजिक सेवा और व्यक्तिगत स्वार्थों की तिलांजलि पर आधारित धर्म द्वारा बेहतर बनाया जा सकता है, ऐसा उनका मत था। कुछ लोगों का मानना था कि वे सवर्णों और ब्राह्मणों के विरोधी थे, लेकिन उनके जीवन में एक बार भी ऐसा मत नहीं आया कि उन्होंने किसी भी एक वर्ग विशेष के लिए कुछ भी बुरा बोला हो। वे कुछ व्यवस्थाओं को लेकर संघर्ष कर रहे थे। उनका संघर्ष कुछ मान्यताओं से था। उनका संघर्ष उच्च जातियों के लोगों से नहीं था। उनका जीवन संघर्षमय था। लेकिन उनका कोई शत्रु नहीं था। वे संघर्ष करते थे, लेकिन किसी को शत्रु नहीं बनाते थे। वे दलितों से कहते थे कि

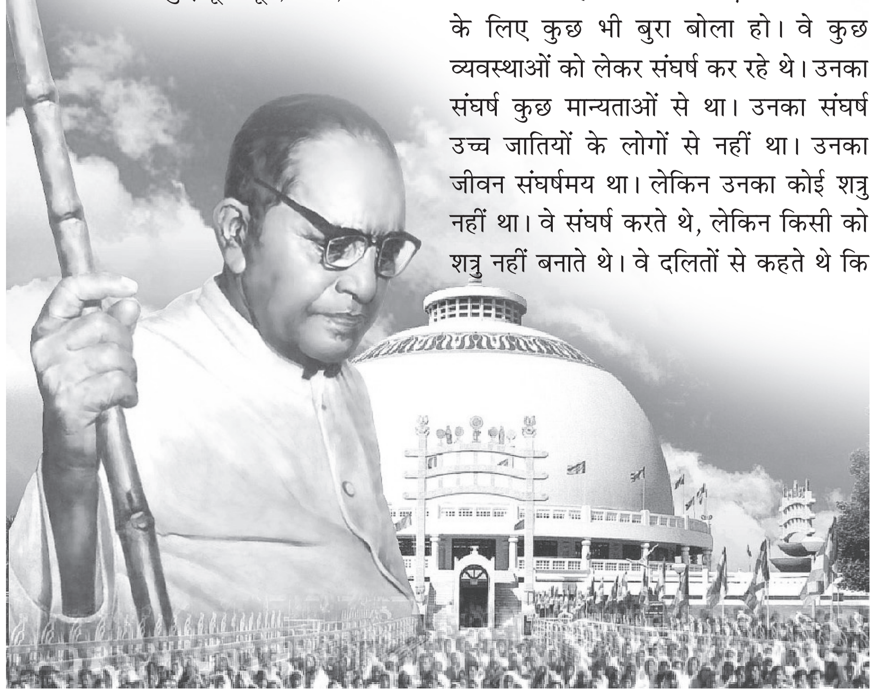

बड़े-बड़े नेताओं से, बड़ी पार्टियों से बड़े चुनावी उद्धारकों से तुम्हारा उद्धार नहीं होने वाला। अपना उद्धार स्वयं करने का प्रयत्न करो, अध्ययन करो, संगठित हो जाओ, आचरण ठीक रखो, जीवन में सुधार लाओ, किसी के भरोसे मत रहो, कोई दूसरा व्यक्ति आकर तुम्हारा उद्धार करने वाला नहीं है। बाबा साहेब का राष्ट्रवादी हृदय चाहता था कि हिन्दू समाज में सुधार हो, हिन्दू समाज एकात्म बने। वे हमेशा एक बात से दुखी रहे कि हिन्दू समाज जात-पांत के कारण असंगठित है। इसी कारण यह देश-विदेशी आक्रांताओं का शिकार बना। अस्पृश्यता एवं दलितों के प्रति उपेक्षापूर्ण व्यवहार से अंग्रेजों ने फूट का बीज बोया और लाभ उठाया। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने कहा कि इस देश में 2000 वर्ष पूर्व अस्पृश्यता शब्द किसी भी शास्त्र में नहीं था। न वेदों में, न उपनिषदों में, न ब्राह्मण ग्रन्थों में है, न अरण्यों में, न गीता में है। उनका मानना है कि यह मात्र 1200-1300 वर्षों में भारतीयों में वैमनस्यता पैदा किया जाने वाला शब्द है।

धर्ममूल्य समाज सुधार का आधार

डॉ. भीमराव अम्बेडकर के लिए कुछ लोगों ने कहा कि वे धर्म के विरोधी थे लेकिन वे स्वयं कहा करते थे कि मैं धर्म पर विश्वास रखता हूँ। धर्म के मूल्यों के बिना समाज का संघर्ष केवल ईर्ष्यालु तथा सत्ता प्राप्त करने वाले लोगों का एक क्षुद्र संघर्ष बन जाएगा। धर्म पर उनका व्यापक विश्वास था। वे परिवर्तन का आधार धर्म को मानते थे। समाज सुधार का आधार भी धर्म है। धर्म के प्रति नवयुवकों में उदासीनता देखकर उनके मन को दुख होता था। वे कहते थे कि धर्म आशा देता है, धर्म विश्वास देता है। धर्म, समाज में मान्यताओं को स्थापित करता है। धर्म का अर्थ-परमार्थ चिन्तन करना, धर्म का आधार अपना पेट भरने के साथ-साथ दूसरे के पेट की भी चिन्ता करते हुए, आगे बढ़ना है। समाज के कल्याण की भावना धर्म के अंदर निहित है। वे यह भी कहा करते थे कि धर्म के नाम पर जो ढोंग है, जो पाखंड है, यह धर्म का मजाक है। मैं इसे मानने को तैयार नहीं हूँ। द्वेष और वैमनस्य कभी सुधार के आधार नहीं बन सकते। इस देश में सुधार का आधार केवल धर्म बनेगा। वे सामाजिक सुधार को ज्यादा आवश्यक मानते थे। वे सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक तीनों प्रकार की आजादी के समर्थक थे। श्रीमद्‌भगवतगीता को अपने सत्याग्रह का प्रेरणा स्रोत मानते थे।

दलितों के आरक्षण का प्रावधान स्वतंत्रतापूर्व की देन -

भारत में आरक्षण के प्रावधान की माँग सन् 1882 में महात्मा फुले ने ब्रिटिश सरकार द्वारा गठित हंटर कमीशन के समक्ष दलित वर्ग के लोगों के लिए नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा के साथ सरकारी नौकरियों में आनुपातिक रूप से आरक्षण एवं प्रतिनिधित्त्व माँगा था। त्रावणकोर राज्य में 1891 में स्थानीय लोगों के लिए स्थान आरक्षित करने के लिए आन्दोलन हुआ था। सन् 1901 में महाराष्ट्र के कोल्हापुर राज्य में साहूजी महाराज द्वारा आरक्षण का प्रावधान किया गया। भारत सरकार अधिनियम 1909, 1919 में आरक्षण का प्रावधान किया गया। सन् 1921 में मद्रास प्रेसीडेन्सी में साम्प्रदायिक आधार पर ब्राह्मण, गैर ब्राह्मणों, मुसलमानों, ईसाईयों एवं आंग्लभाषियों और अनुसूचित जातियों को आरक्षण प्रदान किया गया था। गोलमेज सम्मेलन में 1932 में इस पर स्वीकारोक्ति हुई जिसे भारतीय कांग्रेस ने 1935 में इसका पक्ष लिया जिसे अखिल भारतीय दलित शोषित परिसंघ द्वारा सन् 1942 में व डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने सरकारी सेवाओं में और शिक्षा क्षेत्र में अनुसूचित जाति के आरक्षण की माँग की। उनका स्पष्ट मत था कि पिछड़ों एवं दलितों को न्याय तब तक प्राप्त नहीं हो सकता जब तक उनकी समस्याओं पर ध्यान केन्द्रित नहीं किया जाए। इस तथ्य को ध्यान में रखकर डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने संविधान निर्माण समिति के अध्यक्ष के रूप में 2 वर्ष 11 माह 18 दिन में भारत के संविधान का निर्माण किया, जो दुनिया भर के मुद्रित रूप में सबसे बड़ा संविधान है। इसमें मौलिक अधिकार का अनुच्छेद 14, 15 एवं 16 के माध्यम से समानता का प्रावधान किया है। अनुच्छेद 16 (1) एवं 16 (2) अवसर की समता एवं विभेद रहित व्यवस्था का प्रावधान करते हैं। अनुच्छेद 16 (4) सरकारी नौकरियों में प्रतिनिधित्व के लिए आरक्षण का प्रावधान करता है। प्रारंभिक आरक्षण अनुच्छेद 330 तथा 332 के अनुसार विधायिका में 10 वर्ष के लिए प्रावधान किया गया था, जिसे अनेकानेक संविधान संशोधनों द्वारा बार-बार बढ़ाकर वर्तमान तक लाकर रखा है। डॉ. अम्बेडकर एक तरफ दलितों एवं पिछड़ों के लिए आरक्षण के हिमायती थे, तो दूसरी तरफ उनका यह संदेश भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं था कि 'शिक्षित बनो, संगठित रहो और संघर्ष करो।' समानता का अधिकार आज भारत में ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व में अपरिहार्य बन गया है। भारत के संविधान में सात मूल अधिकारों में 'समानता का अधिकार' निश्चित रूप से महत्त्वपूर्ण अधिकार है, जिसके साये में आज का दलित समुदाय स्वयं को गौरवान्वित महसूस करता है। ❑

(स्वतन्त्र लेखक)

हिंदू समाज की मूल भावना समरसता की है और वर्ण व्यवस्था केवल अर्थशास्त्र के सर्वमान्य श्रम विभाजन के सिद्धांत को अभिव्यक्त करती है? मान्यता है कि विष्णु के मस्तक में ब्राह्मण, भुजाओं में क्षत्रिय, उदर में वैश्य और चरणों में शूद्रों का वास है। वर्ण व्यवस्था की तीखी आलोचना का स्रोत विष्णु के विभिन्न अंगों में वर्णों के इस प्रकार के निवास का विवरण ही प्रतीत होता है। परंतु वर्तमान संदर्भों में व्याख्या की जा सकती है कि इस प्रकार के विवरण में चरण केवल सर्विस सेक्टर का प्रतिनिधित्व करते हैं और यह सेक्टर समाज के लिये उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना कि व्यापार, सुरक्षा अथवा एक थिंक टैंक। वस्तुतः शरीर के सभी अंग समान महत्त्व के होते हैं और सब मिल कर ही एक सम्पूर्ण शरीर की रचना करते हैं।

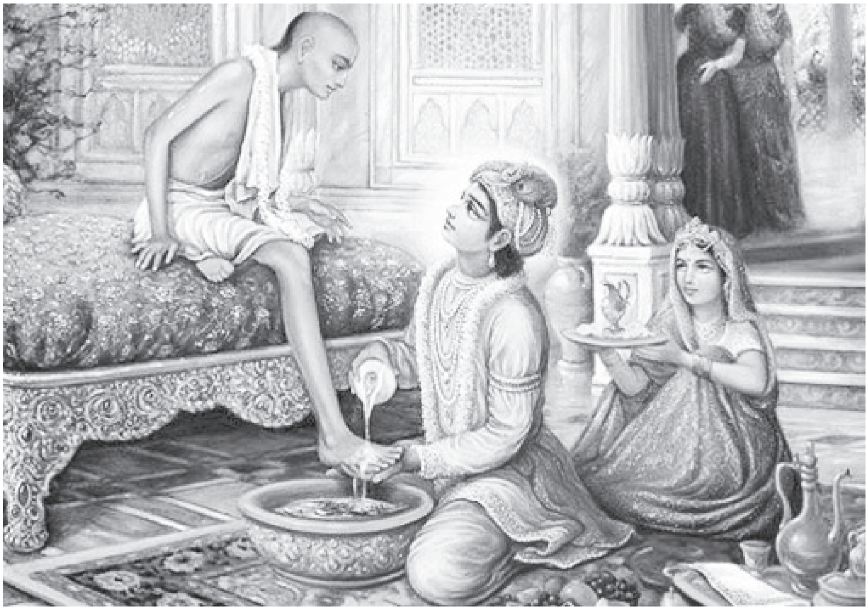

हिन्दुत्व और सामाजिक समरसता

❑ **डॉ. ओम प्रभात अग्रवाल**

हरियाणा में सामाजिक समरसता के विखंडन संबंधी समाचार, पत्र पत्रिकाओं में बहुधा देखने को मिलते रहते हैं। सग्गा गाँव में दलित दूल्हे की घुड़चढ़ी को लेकर उपजे विवाद और झगड़े के कारण इस वर्ग के लोगों का गाँव से बर्हिगमन, बिधौली में भी कुछ ऐसा ही हुआ, मिर्चपुर में सवर्णों और दलितों में झगड़ा और दलितों का पलायन आदि आदि। देश के अन्य भाग भी ऐसे ही जातिगत संघर्षों से अछूते नहीं हैं। एक प्रमुख समाचार पत्र में छपे एक दिल दहला देने वाले सर्वेक्षण के अनुसार तो छोटी जातियों के लिये श्राद्ध कर्म करने वाले ब्राह्मणों तक को विप्र समाज में अत्यंत हेय दृष्टि से देखा जाता है। इस ऊँच-नीच की भावना और जातिगत मिथ्या अहंकार के कारण आज हिंदू समाज में समरसता का तीव्रगति से ह्रास हो रहा है और इसके कारण वह विघटन के कगार पर खड़ा दिख रहा है। स्थिति निश्चित रूप से चिंताजनक है और इसीलिये आज हिंदुओं में वर्ण व्यवस्था, तीखी आलोचना का शिकार बन रही है। महाराज मनु द्वारा दी जाने वाली इस व्यवस्था को कुछ लोग मनुवादी सोच का नाम देने लग गये हैं और देश में एक पूरा का पूरा राजनैतिक दल इस तथाकथित मनुवादी सोच के प्रतिकार को वैचारिक आधार बना कर खड़ा हो गया है।

ऐसा क्यों है जबकि हिंदू समाज की मूल भावना समरसता की है और वर्ण व्यवस्था केवल अर्थशास्त्र के सर्वमान्य श्रम विभाजन के सिद्धांत को अभिव्यक्त करती है? मान्यता है कि विष्णु के मस्तक में ब्राह्मण, भुजाओं में क्षत्रिय, उदर में वैश्य और चरणों में शूद्रों का वास है। वर्ण व्यवस्था की तीखी आलोचना का स्रोत विष्णु के विभिन्न अंगों में वर्णों के इस प्रकार के निवास का विवरण ही प्रतीत होता है। परंतु वर्तमान संदर्भों में व्याख्या की जा सकती है कि इस प्रकार के विवरण में चरण केवल सर्विस सेक्टर का प्रतिनिधित्व करते हैं और यह सेक्टर समाज के लिये उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना कि व्यापार, सुरक्षा अथवा एक थिंक टैंक। वस्तुतः शरीर के सभी अंग समान महत्त्व के होते हैं और सब मिल कर ही एक सम्पूर्ण शरीर की रचना करते हैं। और यदि ये तर्क आश्वस्त करने वाले न माने जाय तो कम से कम इस पर तो अवश्य ही ध्यान देना होगा कि विष्णु के चरण पूजनीय भी हैं। पुराणों में तो ऐसी अनेकों कथायें हैं जो वर्णों में अंतरण संभाव्य बताती हैं तथा ऐसे

अनेकों उदाहरण हैं कि निम्नतम वर्ग का सदस्य भी अधिकतम आदर का अधिकारी बन सकता है। स्मरणीय है कि संत रविदास (संत रैदास) जूता गाँठने वाले वर्ग से थे, संस्कृत के आदि कवि वाल्मीकि व्याध समुदाय से थे तथा महर्षि वेद व्यास की माँ मछुआरिन थीं।

वस्तुत: हिंदुओं के धर्मग्रंथों से बहुत कुछ उद्धृत किया जा सकता है जो जातिगत मिथ्या अहंकार पर भरपूर चोट करता है। वे सब केवल यही ध्वनित करते हैं कि –

''आत्मवत् सर्वभूतेषु, य: पश्यति स: पंडित:''

श्रीमद् भगवद् गीता के पाँचवें अध्याय के 18वें तथा छठें अध्याय के 32वें श्लोक को देखें –

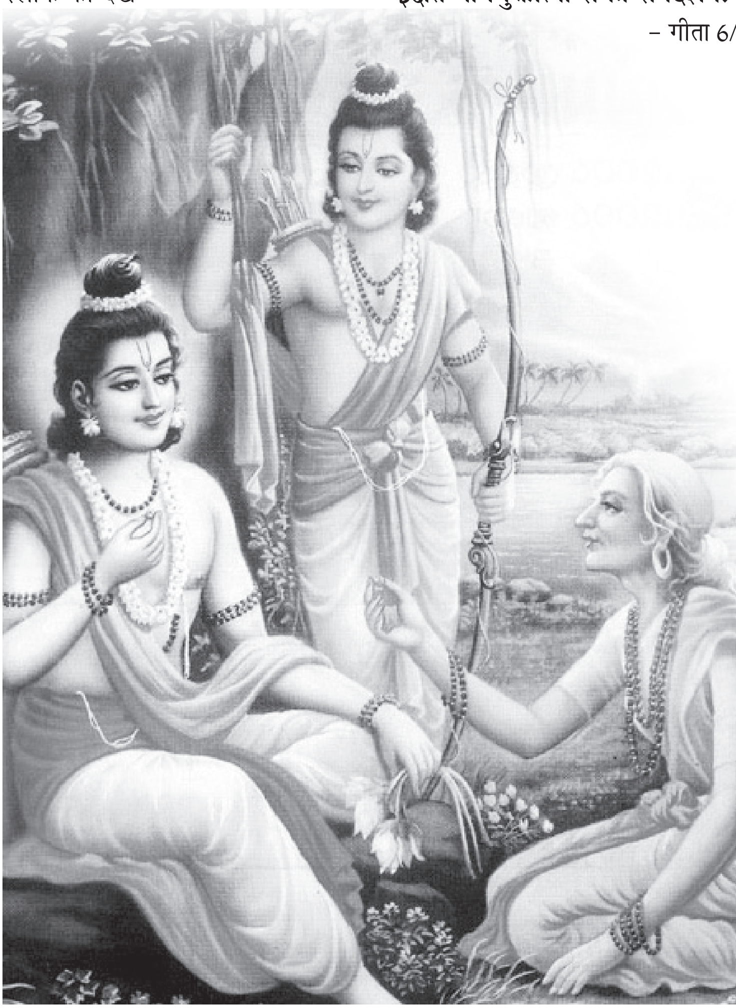

विद्याविनय सम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि
शुनि चैव श्वपाके च पंडिता: समदर्शिन:

– गीता 5/18

ज्ञानीजन, विद्या और विनययुक्त ब्राह्मण, गौ, कुत्ते और चांडाल – सबको समदृष्टि से देखते हैं।

आत्मौप्म्येन सर्वत्र पश्यति योऽर्जुन
सुखं वा यदि वा दु:खं स योगी परमो मत:

– गीता 6/32

हे अर्जुन! वह पूर्णयोगी है जो समस्त प्राणियों में उनके सुखों और दुखों में अपनी भांति वास्तविक समानता का दर्शन करता है। इसी प्रकार –

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शन:

– गीता 6/29

वास्तविक योगी समस्त जीवों में मुझको और मुझमें समस्त जीवों को देखता है। ज्ञानी व्यक्ति मुझ परमेश्वर को सर्वत्र देखता है। पद्मपुराण का निम्न श्लोक भी द्रष्टव्य है –

षटकर्म निपुणो विप्रो मन्त्र तन्त्र विषारद:
अवैष्णवो गुरुर्न स्याद् वैष्णव: श्वपचो गुरु:

सभी कर्मों में निपुण एवं तंत्र मंत्र में पारंगत विद्वान ब्राह्मण यदि वैष्णव (विष्णु भक्त) नहीं है तो गुरु बनने का पात्र भी नहीं है किन्तु शूद्र यदि वैष्णव है तो गुरु बन सकता है।

यजुर्वेद में एक श्लोक (26.2) के अनुसार तो परमात्मा कहता है कि –

''मैं ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, आर्यजन एवं अंत्यज आदि मनुष्य मात्र के लिये वेदों का उपदेश करता हूँ और विद्वानों तुम भी वैसा ही करो।''

शतपथ ब्राह्मण की एक उक्ति है –

''चारों वर्ण, वेदमंत्रों से हवि को शुद्ध करें''।

हिंदू धर्मग्रंथों की इन्हीं भावनाओं की अभिव्यक्ति राम कथा में खुल कर हुई है। राम को शबरी के जूठे बेर खाने में कोई आपत्ति नहीं है और सीता अपने अंतिम दिनों में वाल्मीकि के आश्रम में आश्रय लेने में हिचकिचाती नहीं। निम्न कुलोद्भव केवट को वशिष्ठ गले लगाने में सुख मानते हैं और सीने से उसे लगाकर भरत अपने को धन्य समझते हैं।

इतना सब होते हुये भी कालांतर में अनेकों बार जातिगत अहंकार और ऊँच-नीच का भाव पनपा है और समाज में विघटनकारी प्रवृत्तियाँ उभरी हैं। परंतु जब भी ऐसा हुआ, संतों ने इस पावन धरा पर जन्म लेकर दुष्प्रवृत्ति को थामने और सामाजिक समरसता की पुर्नस्थापना का अथक प्रयत्न किया है। कुछ ऐसा ही मध्यकाल में भी हुआ जब श्री संत रामानुजाचार्य ने वर्ष 1017 में तमिलनाडु के एक कुलीन ब्राह्मण परिवार में जन्म लेकर समरसता के घोर समर्थक भक्ति

आंदोलन के प्रणेता बने। अपने जीवन दर्शन और कृतित्व से उन्होंने जन सामान्य को हिंदू धर्म की मूल भावना से परिचित कराया और इस प्रकार उनकी वर्ण व्यवस्था संबंधी भ्रांतियाँ दूर कीं। उन्होंने धर्म को समाजोन्मुखी बनाया और पूजा का अधिकार सबको प्रदान किया। उनके द्वारा अनेकों मंदिरों का निर्माण हुआ जिनके द्वार आज तक समाज के प्रत्येक वर्ग के लिये खुले हैं। उनके स्वयं के मुख्य गुरु, श्री तिरुक्कोटियूर नांबी निम्न जाति के थे। कहा जाता है कि वृद्धावस्था में संत नदी स्नान को जाते थे दो ब्राह्मणों के कंधों पर हाथ रखकर और लौटते थे दो शूद्रों का सहारा लेकर। कुछ लोगों द्वारा आपत्ति किये जाने पर उनका उत्तर था –

''**न जातिः कारणं लोके गुणाः कल्याण हेतवः**''

जाति नहीं, गुण कल्याण का कारण होता है, वे अवश्य ही समरसता के सबसे बड़े पुरोधा थे। वेंडी डोनिगर ने उन्हें भक्ति सम्प्रदाय का सर्वाधिक प्रभावशाली व्यक्तित्व बताया है तो जे.ए.बी. वान ब्यूटेनेन ने लिखा है कि उन्होंने भक्ति आंदोलन को वैचारिक और सैद्धांतिक धरातल प्रदान किया।

वर्ष 1192 में भारत में शासक के रूप में मुसलमानों के आगमन और उनके गहराते प्रभुत्व के कारण हिंदुओं का आत्मविश्वास डगमगाने सा लगा और अपने ही धर्म की मूल भावना का विस्मरण भी अधिक तीव्र गति से होने लगा। इसके कारण ऊँच-नीच, अस्पृश्यता आदि की जड़ें भी मजबूत होने लग गईं। परंतु इसी काल में एक पूरी की पूरी संत शृंखला का भी उद्भव हुआ जिन्होंने इस प्रवृत्ति के उन्मूलन और समरसता को पुष्ट करने के लिये भरसक प्रयत्न किये। सूरदास, तुलसी, रामानंद, रविदास आदि संत इसी शृंखला की कड़ियाँ थे जिन्होंने इस युग को द्वैतवादी भक्ति परम्परा का स्वर्णकाल बना दिया।

गीता से उद्धृत तीसरे श्लोक की भावना के अनुसार ही तुलसी ने घोषणा की–

''**सियाराम मय सब जग जानी**
करहुं प्रणाम जोर जुग पानी''

और इस प्रकार आदि शंकराचार्य की वाणी को भी लोक स्वर दिया।

''**चांडालोऽस्तु स तु द्विजोऽस्तु**
गुरुरित्येषा मनीषा मम''

चांडाल हो अथवा द्विज, मेरा गुरु हो सकता है। तुलसी की काव्यात्मक घोषणा को संत रामानुजाचार्य की शिष्य परम्परा के संत रामानंद ने अधिक सरल शब्दों में जनसाधारण के लिये सुलभ किया –

''**जात पांत पूछै नहिं कोई**
हरि को भजै सो हरि का होई''

इसी काल में जन्मे बंगाल के महान कृष्ण भक्त, चैतन्य (महाप्रभु) ने भी समरसता का संदेश दिया –

किबा विप्र किबा न्यासी शूद्र केने नय
जेइ कृष्णतत्ववेत्ता शेइ गुरु हय

– चैतन्य चरितामृत 8/128

व्यक्ति विप्र हो अथवा शूद्र, यदि कृष्ण तत्व ज्ञाता है तो वह गुरु ही है।

इन संतों की भक्ति में पगी कल्याणी वाणी ने मध्ययुग के समाज पर सार्थक प्रभाव डाला। परंतु अंग्रेजों के आगमन से स्थिति पुनः विघटनकारी बनने लग गई। सूचना प्रौद्योगिकी के इस युग में तो सोशल मीडिया पर जातिगत टिप्पणियों के कारण स्थिति विस्फोटक बन चुकी है। ऐसे में आवश्यकता है कि धर्मग्रंथों के समरसता संदेश और संतों की कल्याणी वाणी से समाज को पुनः परिचित कराया जाय ताकि सामाजिक विखंडन पर लगाम कसी जा सके। प्रसन्नता की बात है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ इस दिशा में कार्यरत है। इस दुष्प्रवृत्ति को ऐसे संगठनों को रोकना ही होगा, अन्यथा वह हिंदू समाज को भविष्य में दीमक की भांति चाट कर जर्जर कर सकती है। विद्यालयों के पाठ्यक्रमों में भी संतों की प्रासंगिक वाणी एवं रामानुजाचार्य जैसी विभूतियों के जीवन चरित्र के समावेश से उद्देश्य प्राप्ति में सहायता मिलेगी। भारत के भावी समाज में पूर्ण समरसता की दृष्टि से यह अत्यावश्यक है। ❑

(पूर्व सदस्य केन्द्रीय हिन्दी समिति, भारत सरकार)

सीबीएसई की नई कवायद से छात्रों को मिलेगा फायदा

केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (सीबीएसई) की नई कवायद से छात्रों को काफी फायदा मिलेगा। सीबीएसई ने देशभर में पढ़ाई, परीक्षा असेसमेंट और रिपोर्ट कार्ड एक जैसा कर दिया है। यह कवायद आगामी शैक्षणिक सत्र 2017-18 में लागू होगा। इससे शिक्षा व्यवस्था में सुधार होगा।

शिक्षा विशेषज्ञों के अनुसार शिक्षा व्यवस्था एक जैसी होने से देशभर के विद्यार्थियों को फायदा मिलेगा। सीबीएसई ने छठी से नवीं कक्षा तक का असेसमेंट एग्जामिनेशनल सिस्टम बदल दिया है। छठी से आठवीं तक देशभर में सीबीएसई से जुड़े सभी 18 हजार 688 स्कूल अब साल में दो बार परीक्षा लेंगे। इनका नाम रहेगा टर्म- 1 और टर्म-2 होगा। 9वीं के लिए परीक्षा व्यवस्था रिपोर्ट कार्ड 10वीं जैसे रहेंगे। रिपोर्ट कार्ड में विषयों की समझ के साथ ही स्पोर्ट्स अन्य एक्टीविटीज की परफॉर्मेंस भी रहेगी। गौरतलब है कि सीबीएसई स्कूलों में अब तक असेसमेंट और एग्जाम का पैटर्न एक जैसा नहीं है। कोई 3 तो कोई 4 परीक्षा लेता है। सभी परीक्षाओं का औसत निकालकर सालाना रिजल्ट बनता है। सबके रिपोर्ट कार्ड का पैटर्न भी अलग रहता है।

Gandhi Can Never Die

We all were born in a free India and it is only through books that we have come to know about the freedom struggle. Gandhi was the foremost among the Heroes of our freedom struggle. During the current year, nation would be celebrating the centenary celebrations of the Champaran Satyagrah and celebrating 150th birth anniversary of great Mahatama in year at hand. Apart from and above so many things, Gandhi also did teach the world a practical philosophy of life. Unfortunately, however , we the Indians have forgotten the path and the principles of Gandhian philosophy. The present article aims at recollecting and reviving the ideals of Gandhi which he lived by and lived for.

It may be noted Gandhi was highly influenced by Tolstoy and his vision of life on this planet. Himself a saintly figure, Gandhi had so many English friends despite the fact that he had vowed to himself to free his country from the yoke of the British Raj. He has equally religious as he regularly chanted prayers to Lord Rama and Geeta – what though he was secular and had deep respect for all religions. He taught the masses to wear cloth and be self-sufficient economically what though he himself remained half clad throughout his life. Taught people the glorious path of truth and non-violence what though himself fell a pray to violence.

As a matter of fact the seeds of history are sown in trivial moments of life and no one present during such moment can know or analyse their significance. Therefore , it is rightly said that the basics of each moment is as important as heart beat. In 1893, while

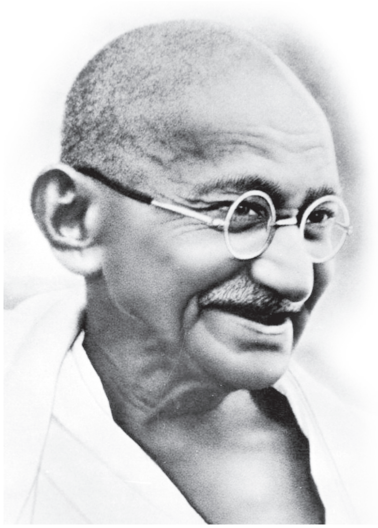

travelling Durban to Pretoria, whatever had happened with him in the train compartment and the mal-treatment he encountered in the stage coach all this inspired Gandhi to fight against the inhumane class distinction based on color and for long 21 years he fought against the white supremacy with the weapons of stayagrah and nonviolence. Finally on 8th July 1914, he and his men came victorious.

It was on 9th January 1915 that Gandhi returned to India landing on the Apollo seaport, Bombay and soon after found himself in the throes of India's struggle for freedom. In India he launched major movement like Champaran Stayagrah, Civil disobedience, Salt satyagrah and Quit India. And during his long career of 33 years as a freedom fighter, he remained behind the bars for as many as eleven times. Netaji Subhash Chandra Bose rightly called him the 'Father of Nation' while Swami Shraddhanand called him Mahatma i.e. great soul.

The world today is looking up to the ideals of Gandhi and the Gandhian philosophy. In 2007, the UNO declared the year as the one of nonviolence and started celebrating the international non violence day on his birth anniversary. In 2011, a statue of Gandhi was set up in Africa as a mark of apology for the sins committed against him years and years ago. The democratic leader of Myanmar Anug San Sun Kyi has been preaching the people to read Gandhi and learn lessons of self discipline. Several world leaders like Martin Luther King (Jr), Nelson Mandela and even Barak Obama have walked under the shadow of Gandhi and his principles.

We Indians may best justify our Gandhian legacy by following and practising what he had lived and died for Gandhi still is significant in today's world and may hopefully be for years to come. World fame Physicist Albert Einstein said of Mahatma Gandhi that "Generations to come will scarcely believe that such a one as this ever in flesh and blood walked upon this earth" Gandhi achieved freedom for India through a unique revolution built on the edifice of Satyagrah – a concept quite novel to international politics. Gandhi defined Satyagrah as a soul force – the force which is born out of the basic elements of truth and non violence.

Today, we need Gandhi more than ever before and more directly keeping in view the present scenario torn between violence and corruption. It is only with the Gandhian weapons of Satyagrah and non violence that we can fight with and defeat the evil forces that have crept in to our society and the world. The panacea to the ailment of mankind lies only and only in Gandhi and the Gandhian way of life.❑

Gyan Sangam

A Workshop on Bharatiya Academic Ecosystem

A two day national level workshop- 'Gyan Sangam' was organized under the aegis of Pragya Pravah to brainstorm on the issues pertaining to Bharatiya perspectives on Education. With the primary objective of creating the academic ecosystem from Bharatiya perspective outside the government system, the event organized at Maharaja Agrasen Institute of Technology & Management, focused on teaching, learning and content aspects of education in various disciplines. 721academicians and experts, including 51 Vice-Chancellors, from all the 29 states participated in the brainstorming.

In an effort to give platform and ensure capacity building and encouragement for academicians who are working on Bharatiya perspectives in various academic disciplines, Gyan Sangam was the first ever attempt in this direction. Scholars and researchers ranging from the subjects of art & culture, theatre, philosophy, social sciences, management, mass communication and pure sciences contributed in the deliberations.

The Sangam was broadly divided in three parts. Firstly, in parallel sessions, the participants presented and discussed content, contemporary trends and challenges in their respective disciplines.

Secondly, there were expert sessions dedicated to different themes. First speaker was an eminent thinker and columnist S Gurumurthy spoke on Cultural Onslaught, the session was chaired by the VC of BHU Dr. G C Tripathi. In the second session on Intellectual Colonization, under the Chairmanship of former Principal of Brihan Maharashtra Commerce College, Pune Aniruddha Deshpande, Acharya Vamdev Shastri (David Frawley), eminent writer and thinker and Dr. Manohar Shinde, Founder Director, Dharma Civilisation Foundation, USA presented their views. In the last special session on 'Resurgence of Nationalism – East & West', Prof. V. P. Nanda, Professor of International Law, Denver University presented his views, the session was chaired by Prof. B.K. Kuthiala, VC, MCRPV, Bhopal.

Thirdly, participants could interact with the RSS Sarsanghachalak Dr. Mohan Bhagwatand could ask their queries and present their suggestions about creating the non-governmental and autonomous academic ecosystem in education. Sh Suresh Soni, RSS Sah-Sarkaryavah and ICHR Chairman Prof. Sudershan Rao were present in the opening session inaugurated by the Sarsanghachalak. RSS Sah-Sarkaryavah Dr. Krishna Gopal also interacted with the participants.

The Sangam ended with the concluding address of the Sarsanghachalak in the presence of Prof Ashok Modak, Professor Emeritus, Centre for Eurasian Studies, University of Mumbai. The Sarsanghachalak highlighted that this is not an alternative but the real attempt to develop a Bharatiya perspective. He shared various efforts that are being made by voluntary organizations in this direction. The academicians resolved to take similar efforts in their own states about creating such forums with reference to their subjects for inculcating Bharatiya perspectives in education.

शैक्षिक समाचार

सीबीएसई ने 11वीं-12वीं कक्षा के 41 विषय हटाए

केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (सीबीएसई) ने आगामी शिक्षा सत्र से 41 विषय पाठ्यक्रम से हटा दिए हैं। इनमें 7 विषय शैक्षणिक और 34 वोकेशनल हैं। आगामी शिक्षा सत्र में 11वीं और 12वीं में दाखिला लेने वाले छात्रों के सामने इन विषयों का प्रस्ताव स्कूलों को नहीं देने के लिए कहा गया है। हालांकि, 11वीं में उक्त विषय पढ़ रहे छात्रों के लिए कोई परिवर्तन नहीं किया गया है। यह बदलाव 2017 में 11वीं में दाखिला लेने जा रहे छात्रों के लिए लागू होगा। इन विषयों में छात्रों की लगातार घटती रुचि की वजह से बोर्ड ने यह फैसला लिया है। सीबीएसई ने इन सभी विषयों को रुचि घटने के आँकड़ों के आधार पर हटाया है। इन विषयों में बीते सत्रों में छात्रों का पंजीकरण काफी कम हुआ। ये विषय हटने के बाद अब छात्रों के लिए रुचि के मुताबिक विषय का चयन काफी आसान हो जाएगा। आगामी शिक्षा सत्र से जो सात विषय पाठ्यक्रम से हटाए गए हैं, उनमें रचनात्मक लेखन एवं अनुवाद अध्ययन, मानवाधिकार, लैंगिक अध्ययन, दर्शनशास्त्र, ग्राफिक डिजाइन, थियेटर अध्ययन, पुस्तकालय व सूचना विज्ञान शामिल हैं।

अगले सत्र से जिन 34 वोकेशनल विषयों को सूची से बाहर किया गया है, उनमें जो प्रमुख विषय हैं उनमें पॉल्ट्री से संबंधित चार विषयों के अलावा डेयरी एनिमल्स, नेल टेक्नोलॉजी, रिटेल, आफिस कम्युनिकेशन एवं रेफ्रिजरेशन से संबंधित दो विषय शामिल है। स्वास्थ्य क्षेत्र से जुड़े कुछ विषय भी शामिल है। इनमें फर्स्ट एड इमरजेंसी मेडिकल केयर, ऑप्थेलमिक टेक्नोलॉजी, रेडियोग्राफी, चाइल्ड हेल्थ नर्सिंग, मिडवाइफरी, हेल्थ सेंटर मैनेजमेंट जैसे विषय शामिल है। इसके अलावा सीबीएसई मूल्यांकन प्रक्रिया बदलने जा रहा है। इसके तहत आगामी शिक्षा सत्र से 10वीं परीक्षार्थियों को पाँच के बजाए छह विषय पढ़ने पड़ सकते हैं। अभी तक 10वीं में छात्रों को दो भाषाओं के साथ सामाजिक विज्ञान, गणित और विज्ञान, विषय पढ़ना पड़ता है। अतिरिक्त विषय के तौर पर छात्र एक व्यावसायिक विषय भी चुनता था। आगामी सत्र से व्यावसायिक विषय का अध्ययन भी अनिवार्य हो सकता है। यह बदलाव राष्ट्रीय कौशल योग्यता रूपरेखा के तहत अनिवार्य विषय के रूप में व्यावसायिक पाठ्यक्रम की शिक्षा दे रहे स्कूलों के लिए हुआ है। यदि कोई छात्र तीन मुख्य विषयों में से एक में पास नहीं होता है तो वह छठे अतिरिक्त विषय में प्रस्तावित किया जा सकेगा। इसी बदलाव से बोर्ड का परिणाम भी जारी होगा।

एन.डी.टी.एफ. का नव सम्वतसर स्नेह मिलन एवं व्याख्यान सम्पन्न

भारतीय नववर्ष चैत्र शुक्ल प्रतिपदा विक्रमी संवत् 2074 के शुभारम्भ पर 28 मार्च, 2017 को एन.डी.टी.एफ. परिवार ने दिल्ली विश्वविद्यालय में मिलन व शुभेच्छा कार्यक्रम का आयोजन किया गया। प्रति वर्ष की भाँति दिल्ली विश्वविद्यालय में इस बार कार्यक्रम का आयोजन उत्तरी परिसर के दौलत राम कालेज में किया गया।

मुख्य अतिथि महेन्द्र कपूर, राष्ट्रीय संगठन मंत्री, अ.भा.रा.शै.म. ने और मुख्य वक्ता डॉ. बजरंग लाल गुप्त, संघचालक, उत्तरी क्षेत्र (राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ) ने गरिमामयी उपस्थिति से कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई।

भारतीय नववर्ष के महत्त्व पर डॉ. बजरंग लाल गुप्त ने प्रकाश डालते हुए भारतीयता की सादगीपूर्ण जीवनशैली, सटीक कालगणना और वैज्ञानिक आधार पर स्थापित श्रेष्ठ पद्धतियों का उल्लेख करते हुए कार्यक्रम में भाग लेने के लिए आए हुए शिक्षकों का नूतनवर्षाभिनंदन किया।

कार्यक्रम की अध्यक्षता दौलत राम कालेज की प्राचार्या डा. सविता राय ने की। इस अवसर पर एन.डी.टी.एफ. अध्यक्ष व EC सदस्य डॉ. अजय भागी ने सभी शिक्षकों को भारतीय नव वर्ष की बधाई देते हुए दिल्ली विश्वविद्यालय के शैक्षिक परिवेश में व्याप्त प्रशासनिक व सरकारी समस्याओं को दूर करने में किए जा रहे प्रयासों का उल्लेख किया।

कार्यक्रम में सम्मिलित हुए लगभग 300 शिक्षकों ने आपस में नव वर्ष शुभेच्छा अभिनंदन किया।

एन.डी.टी.एफ. महासचिव डॉ. वी.एस. नेगी ने कार्यक्रम का संचालन करते हुए नव संवत्सर को भारतीय संस्कृति का गौरव बताते हुए वहाँ आए हुए सभी बंधु-बहनों को पुनः भारतीय नव वर्ष की हार्दिक बधाई दी व नव वर्ष सब के परिवार के लिए सुख समृद्धि और खुशियों से भरपूर हो यह प्रार्थना की।

यूजीसी में बड़े बदलाव के लिए पहला रोडमैप तैयार

भारी आलोचना का सामना कर रहे हायर एजुकेशन रेग्युलेटर यूनिवर्सिटी ग्रांट्स कमिशन (यूजीसी) में बड़े बदलाव की तैयारी है। श्री प्रकाश जावड़ेकर की अगुवाई वाली ह्यूमन रिसोर्स डिवेलपमेंट (एचआरडी) मिनिस्ट्री ने नई व्यवस्था को लाने के लिए पहले रोडमैप को अंतिम रूप दे दिया है। इसमें कम से कम रेग्युलेशन पर जोर होगा।

एचआरडी मिनिस्ट्री की योजना यूजीसी के सभी पुराने रेग्युलेशंस को खत्म करने, परफॉर्मेंस के आधार पर संस्थानों की कैटिगरी तैयार करने, बेहतरीन संस्थानों को प्रोत्साहित कर उन्हें यूनिवर्सिटी में तब्दील करने और पिछड़े और गड़बड़ संस्थानों को दंडित करने की है। यूजीसी की रिस्ट्रक्चरिंग और हायर एजुकेशन को मुक्त करने के बजटीय ऐलान के बाद सरकार इस पर अमल के लिए फास्ट ट्रेक प्लान पर अमल करने की तैयारी में है हालांकि, इसमें लंबे खिचने वाले किसी विधायी बदलाव की बात नहीं है। विशेष सूत्रों से इस सिलसिले में जो जानकारी मिली है, उसके मुताबिक ब्यौरा कुछ इस तरह है:-

तीन कैटिगरी

एचआरडी मिनिस्ट्री ने ऐसे सिस्टम का प्रस्ताव किया है, जहाँ परफॉर्मेंस और कई शर्तों के आधार पर सभी संस्थानों को तीन कैटिगरी में डाला गया है। टॉप कैटिगरी के इंस्टीट्यूट्स/कॉलेजों को विस्तार की पूरी स्वायत्तता दी जाएगी। इसके तहत उन्हें नए कोर्स, फीस तय करने आदि की आजादी होगी। सबसे निचली कैटिगरी में रहने वाले संस्थानों को यूजीसी समर्थित मेंटरिंग प्रोग्राम में डाला जाएगा, ताकि उन्हें टॉप कैटिगरी स्टेटस हासिल करने में मदद मिल सके। हालांकि, अगर वे निश्चित समय सीमा के भीतर ऐसा करने में नाकाम रहे, तो उन्हें बंद या उनका विलय किया जा सकता है। दूसरी तरफ, बेहतरीन संस्थानों को यूनिवर्सिटी में बदलने के लिए तेज रास्ता मुहैया कराया जाएगा।

स्वायत्तता

नए रेग्युलेटरी निजाम का फोकस स्वायत्तता पर होगा। प्रस्ताव के मुताबिक, कॉलेजों को यूनिवर्सिटी की मंजूरी के बिना नए कोर्स शुरू करने की इजाजत दी जानी चाहिए और यूनिवर्सिटी को कोर्स के लिए डिग्री देना जरूरी होना चाहिए। स्वायत्त कॉलेजों के लिए रिस्ट्रक्चरिंग का फैसला बेहतरीन संस्थानों को यूनिवर्सिटी स्टेटस में बदलने के मकसद से किया गया है।

जहाँ तक ऑल इंडिया काउंसिल ऑफ टेक्निकल एजुकेशन (एआईसीटीई) के तहत आने वाले संस्थानों की बात है, तो 75 प्रतिशत मान्यता प्राप्त कोर्स वाले संस्थानों को इन कोर्सेज में मार्केट डिमांड के मुताबिक सिलेबस में बदलाव करने की इजाजत होगी।

टीचर्स की भर्ती, रिसर्च के क्षेत्रों, कोर्स तय करने, डिग्री देने, फैकल्टी की जरूरतों और फीस तय करने जैसे सभी पहलुओं में स्वायत्तता दी जाएगी। गैर-जरूरी पाए जाने वाले सभी यूजीसी रेग्युलेशंस को खत्म कर दिया जाएगा या इसमें बदलाव किया जाएगा। यूजीसी ने पहले ही ऐसे रेग्युलेशंस की पहचान करने की प्रक्रिया शुरू कर दी है।

जवाबदेही

स्वायत्तता के साथ इस स्कीम में जवाबदेही के भी पहलू को शामिल किया जाएगा और इससे जुड़ी शर्तें तय की जाएँगी। सीखने के नतीजों और क्वॉलिटी मानकों की पहचान की भी पहचान की जाएगी।

रुक्टा (राष्ट्रीय) की प्रदेश कार्यकारिणी बैठक सम्पन्न

रुक्टा (राष्ट्रीय) की प्रदेश कार्यकारिणी बैठक 29 मार्च 2017 को राजस्थान विश्वविद्यालय के देराश्री शिक्षक सदन में संगठन अध्यक्ष डॉ. दिग्विजय सिंह की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। सर्वप्रथम महामंत्री डॉ. नारायण लाल गुप्ता द्वारा गत बैठक का कार्यवाही विवरण प्रस्तुत किया गया जिसे सदन ने सर्वसम्मति से अनुमोदित किया। पिछली बैठक के पश्चात् संगठन की वैचारिक, सांगठनिक व शिक्षक समस्याओं से संबंधित जानकारी महासंघ द्वारा दी गई। इसके बाद प्रदेश अधिवेशन कर्त्तव्य बोध दिवस एवं नवसंवत्सर कार्यक्रमों की समीक्षा की गई।

बैठक में अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के महामंत्री प्रो. जे.पी. सिंघल ने महासंघ की विभिन्न गतिविधियों की विस्तृत जानकारी दी। कार्यकर्ताओं को संबोधित करते हुए राष्ट्रीय संगठन मंत्री श्री महेन्द्र कपूर ने विस्तारक एवं पूर्णकालिक अभियान के बारे में बताया तथा संगठन के प्रति समर्पण भाव को और बढ़ाने का आह्वान किया। इसके पश्चात् आगामी दो वर्षों के लिए 18 विभागों में दायित्व हेतु चर्चा कर अध्यक्ष, महामंत्री को अंतिम निर्णय हेतु अधिकृत किया गया। आगामी कार्यक्रमों में 10 व 11 जून को अजमेर में विचारवर्ग आयोजित करने का निर्णय किया गया। आभार प्रदर्शन एवं सामूहिक कल्याण मंत्र के साथ बैठक संपन्न हुई।

AJKLTF delegation calls on MOS for Education

A delegation of All Jammu Kashmir and Ladakh Teachers Federation (AJKLTF) under the aegis of Akhil Bhartiya Rashtriya Shaikshik Mahasangh led by Pardeep Sharma , State Vice President and General Secretary Ratan Sharma today called on Minister of State for Education Smt Priya Sethi at Civil Secretariat Jammu and submitted a charter of demands. Members of the federation highlighted the burning issue of teachers Community, including revocation of SRO 66 in which the State government has made screening test mandatory for distance mode degree holders in promotion, release of pending salary of teachers working under SSA and NPS and proper implementation of Transfer Policy. The teachers said that by issuing the SRO 66, The state Government has not only challenged its own order where it has allowed teachers community to enhance their education through distance mode by issuing a list of some recognised Universities such as IGNOU, Jammu university and Kashmir University but also discredited such prestigious Universities. The Teachers demanded immediate revocation of the SRO and declare the complete promotion list of Masters of 2014.

The Teachers demanded adjustment of remaining teachers promoted as Master in 2014, Withdrawl of SRO 66 where B.Ed Degree of Jamia Urdu Aligarh considered equivalent to Jammu/Kashmir Universities. But the fact is that the University is not recognized by the UGC. The teachers also suggested that if the government was really keen to bring quality in education, screening test should be made mandatory for all promotions without any discrimination. The delegation also warned of serious consequences if the demands of the teachers are not redressed. The teachers also stressed on the review of fee structure upto 8th standard Smt. Priya Sethi after giving patient hearing to the delegation assured to look into the issues of the Teaching community. She assured for early redressel of the issue and also assured that she would take necessary action on other issues raised by the delegation. She also assured the Federation that all the remaining teachers promoted as Masters would be adjusted very soon. The Hon'ble MOS directed the concerned authorities to put the file before her table immediately in which the B.Ed degree awarded by Jamia Urdu University Aligarh made equivalent at par with the Jammu/Kashmir Universities. The MOS assured the Federation that the SRO 66 will be revoked very soon. The delegation was comprised of Radha Krishan, Ravi Kumar, Rajeev Choudhary, Raj Kumar, Arun kumar and others.

रा. शै. महासंघ उत्तर प्रदेश की साधारण सभा बैठक लखनऊ में सम्पन्न

राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ उत्तर प्रदेश की साधारण सभा की बैठक सरस्वती विद्या मंदिर अलीगंज, लखनऊ में संपन्न हुई। बैठक का शुभारंभ अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के राष्ट्रीय संगठन मंत्री महेंद्र कपूर, सह संगठन मंत्री ओमपाल सिंह, उच्च शिक्षा संवर्ग के प्रभारी महेंद्र कुमार ने सरस्वती जी की प्रतिमा के समक्ष दीप प्रज्वलन कर किया।

इस अवसर पर राष्ट्रीय संगठन मंत्री महेंद्र कपूर ने कहा कि सरकार का रोना रोने वाले लोग समाज परिवर्तन का वाहक नहीं बन सकते। संगठन सरकार के सहारे नहीं चलता है, संगठन, समाज में राष्ट्र भावना को मजबूत करनें में अनवरत प्रयासरत है। विद्यार्थियों को आचरणवान बनाना ही राष्ट्र निर्माण है।

सह संगठन मंत्री ओमपाल सिंह ने संबोधित करते हुए कहा कि कार्यक्रम में संगठन और संगठन में कार्यक्रम होते रहने चाहिए। संगठन को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए जुड़े हुए लोगों को सम्पूर्ण कार्ययोजना के साथ अपने सामर्थ्य का प्रयोग करना होगा। नवसंवत्सर राष्ट्रीय गौरव दिवस के रूप में मनाया जायेगा जिसके लिए सभी इकाइयाँ पूर्व में ही अपनी सम्पूर्ण तैयारी कर लें। इस अवसर पर नयी कार्यकारणी का सर्वसम्मति से गठन किया गया। जिसमें लखनऊ विश्वविद्यालय के प्रो. अनिल कुमार सिंह अध्यक्ष, इलाहाबाद के डॉ. ऋषिदेव त्रिपाठी महामंत्री, और डॉ. सुरेश पति त्रिपाठी कोषाध्यक्ष घोषित किये गए। नव निर्वाचित अध्यक्ष प्रो. अनिल कुमार सिंह ने कहा की नई टीम नयी ऊर्जा के साथ संगठन विस्तार को नया आयाम देगी। नव निर्वाचित महामंत्री डॉ. ऋषिदेव त्रिपाठी ने सभी का आभार प्रकट किया।

गतिविधि

शैक्षिक मंथन संस्थान का नववर्ष कार्यक्रम जयपुर में सम्पन्न

शैक्षिक मंथन संस्थान, जयपुर द्वारा 29 मार्च, 2017 को सायं में ज्ञानाश्रम विद्यालय, मानसरोवर, जयपुर में 'प्रकृति एवं भारतीय कालगणना' विषय पर व्याख्यान आयोजित किया गया। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि श्री अरुण चतुर्वेदी (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्री राजस्थान सरकार), मुख्य वक्ता श्री हनुमान सिंह (क्षेत्र कार्यवाह, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ), अध्यक्षता डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल (अध्यक्ष, अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ) द्वारा की गई।

भारतीय कालगणना की वैज्ञानिकता व प्रामाणिकता पर मुख्य वक्ता श्री हनुमान सिंह जी ने कहा कि अपने देश में अंग्रेजों के समय से एक कालगणना प्रचलन में आ गई जिसको भारत के लोगों ने धीरे-धीरे स्वीकार किया। हम सब लोग इस कालगणना के वैज्ञानिक स्वरूप की ओर ध्यान देंगे उससे ज्ञात होता है कि ग्रोग्रेरियन कलेण्डर की कोई वैज्ञानिक प्रामाणिकता नहीं है जबकि भारतीय कालगणना की वैज्ञानिकता की पुष्टि स्वीकार्य है। कालगणना इतिहास का बोध कराती है। अंग्रेजी कलेण्डर में जूलीयस सीजर के नाम पर जुलाई महीने का नाम पड़ा। अगस्त महीने का नाम ऑगस्टस के नाम पर पड़ा। वहीं भारतीय महीनों का नाम खगोलीय आधार की पुष्टि करता है। भारतीय पश्चिम का अंधानुकरण को छोड़ भारतीय, पद्धति को अपनाए तो निश्चित रूप से भारतीय संस्कृति का व्याप बढ़ेगा।

श्री अरुण चतुर्वेदी ने कहा कि पीढ़ी दर पीढ़ी भारतीय लोगों द्वारा अंग्रेजी कलेण्डर को स्वीकार कर लिया गया, लेकिन भारतीय लोगों के मन में भारतीय पंचांग की महत्ता आज भी है। वर्तमान में भी परम्परानुसार भारतीय कालगणना को स्वीकार करते हुए इसे अपनाते रहे हैं और आगे भी अपनाएंगे।

अध्यक्षीय उद्‌बोधन में डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल ने बताया कि भारतीय काल गणना की जानकारी के अभाव में हम उसकी वैज्ञानिकता के उपर प्रश्न चिन्ह खड़े करते हैं जबकि उसकी वैज्ञानिकता को समझने के पश्चात उसके महत्त्व का पता चलता है। भारतीयों द्वारा खगोलीय मास को प्रामाणिकता के आधार पर पंचांग का निर्माण किया जिससे विश्वभर के वैज्ञानिक इस कालगणना का लोहा मानते है। ऋतु चक्र के आधार पर फसल का निर्धारण किया जाता है। भारतीय त्योहार भारतीय कालगणना के आधार पर ही मनाए जाते हैं। वर्ष प्रतिपदा की महत्ता बताते हुए कहा कि भगवान राम का राज्याभिषेक, युधिष्ठर का राज्याभिषेक, सिख धर्म के गुरु अंगददेव का जन्म दिवस, सिंधी समाज के धर्मगुरु झूलेलाल का जन्म, साथ ही डॉ. हेडगेवार जी का जन्म भी आज ही के दिन हुआ एवं शकों को हराने के कारण राजा विक्रमादित्य द्वारा विक्रम संवत् का आरंभ किया गया। आज ही के दिन राजस्थान राज्य का निर्माण हुआ। हमारी भारतीय कालगणना भारतीय संस्कृति की जड़ों व मूल ग्रन्थों से जुड़ी हुई है।

इस अवसर पर अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के राष्ट्रीय संगठन मंत्री महेन्द्र कपूर, महामंत्री जे.पी. सिंघल, पूर्व कुलपति प्रो. पी.एल. चतुर्वेदी उपस्थित रहे।

अंत में केशव बडाया (मानद सचिव सेंट विल्फ्रेड कॉलेज, मानसरोवर, जयपुर) ने सभी अतिथियों एवं आगन्तुकों का आभार व्यक्त किया। कार्यक्रम संयोजक बसन्त जिंदल ने मंच संचालन किया।

नवसंवत्सर की पूर्व संध्या पर केकड़ी में आयोजित मशाल जुलूस

राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) केकड़ी, अजमेर ने 27 मार्च 2017 को नवसंवत्सर विक्रमी संवत् 2074 की पूर्व संध्या पर सायं 07 बजे उच्च माध्यमिक विद्यालय से सदर बाजार, घंटाघर, खिड़की गेट, सरसडी गेट, बस स्टेण्ड, उपखण्ड अधिकारी परिसर होते हुए मशाल जुलूस उप शाखा अध्यक्ष कैलाश जैन के सानिध्य में सैंकड़ों शिक्षकों द्वारा निकाला गया। सदर बाजार में अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के राष्ट्रीय कोषाध्यक्ष बजरंग प्रसाद मजेजी ने नवसंवत्सर का महत्त्व बताते हुए कहा कि पूर्व संध्या पर दीप प्रज्जवलन से देवगणों का आह्वान करना हमारी सनातन परम्परा का अंश रहा है जिसे व्यवहार में लाकर हम क्षेत्र, प्रदेश, राष्ट्र की सुख, समृद्धि विकास हेतु शुभकामना करते हैं। संभाग मंत्री बिरदी चंद ने संबोधित करते हुए भारतीय संस्कृति में नववर्ष के शुभागमन का महत्त्व बताया तथा देशवासियों को शुभकामना दी। उपशाखा मंत्री राजेन्द्र सुजड़िया ने शिक्षकों का आभार व्यक्त किया।

रुक्टा (राष्ट्रीय) द्वारा प्रदेश भर में नवसंवतसर कार्यक्रम सम्पन्न

रुक्टा (राष्ट्रीय) की विभिन्न इकाइयों द्वारा भारतीय नववर्ष विक्रम संवत् 2074 का स्वागत समारोहपूर्वक किया गया। संगठन के कार्यकर्ताओं द्वारा व्यक्तिगत एवं सामूहिक रूप से महाविद्यालय/ विश्वविद्यालय परिसर एवं सार्वजनिक चौराहों पर विद्यार्थियों, शिक्षकों एवं समाज बंधु-बहिनों को तिलक लगाकर एवं प्रसाद वितरित कर शुभेच्छाएँ दी गईं। भारतीय कालगणना के महत्त्व से संबंधित विचार गोष्ठियाँ भी आयोजित की गईं।

अलवर में राजर्षि महाविद्यालय, कला महाविद्यालय, वाणिज्य महाविद्यालय, कन्या महाविद्यालय इकाइयों के कार्यकर्ताओं ने अशोक सर्किल पर रोली चावल का तिलक लगाकार व मिष्ठान वितरित कर नववर्ष की हार्दिक मंगलकामनाएँ दीं। इस अवसर पर भारतीय कालगणना की वैज्ञानिकता पर एक संगोष्ठी भी आयोजित की गई। मुख्य वक्ता जयपुर प्रांत के सहसेवा प्रमुख श्री सूर्यप्रकाश रहे। विषय प्रवर्तन डॉ. गंगाश्याम गुर्जर ने किया तथा अध्यक्षता सेवानिवृत्त प्राचार्य प्रो. एल.एल. शर्मा ने की। संगोष्ठी में विभाग संघचालक डॉ. कृष्ण कुमार गुप्ता, विभाग प्रचारक श्री विशाल जी सहित सैंकड़ों शिक्षक उपस्थित रहे।

राजकीय महाविद्यालय, जैसलमेर में आयोजित संगोष्ठी में संगठन के प्रदेश कार्यकारिणी सदस्य डॉ. नेमीचंद गर्ग ने संवतसर की महत्ता बताई। इस अवसर पर प्राचार्य डॉ. जे. के. पुरोहित एवं व्याख्याता डॉ. एस.एस. मीणा ने भी विचार व्यक्त किए।

राजकीय महाविद्यालय, चूरू में नवसंवत्सर कार्यक्रम प्राचार्य डॉ. एम.डी. गोरा के मुख्य आतिथ्य एवं डॉ. एल.एन. आर्य की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम में प्रो. सुरेन्द्र सोनी, डॉ. महावीर सिंह, डॉ. राजकुमार लाटा, डॉ. भवानी शंकर शर्मा ने भी भारतीय कालगणना की महत्ता पर प्रकाश डाला।

राजकीय महाविद्यालय, अनूपगढ़ में संगठन उपाध्यक्ष डॉ. सत्यनारायण शर्मा के नेतृत्व में शिक्षकों एवं छात्रों द्वारा नववर्ष का स्वागत हर्षोल्लास से किया गया। डॉ. भागीरथ सिंह चौधरी, डॉ. महबूब खान, डॉ. मंगला शर्मा आदि ने वर्ष प्रतिपदा के ऐतिहासिक व सांस्कृतिक पक्ष की जानकारी दी।

राजकीय वाणिज्य महाविद्यालय कोटा में आयोजित संगोष्ठी में मुख्यवक्ता डॉ. गीताराम शर्मा ने कहा कि चैत्र शुक्ल प्रतिपदा सूर्य, चन्द्रमा, पृथ्वी ही नहीं अपितु अनेक ग्रहों, उपग्रहों, नक्षत्रों, राशिपिण्डों के अन्तर्सम्बन्ध पर आधारित कालगणना प्रणाली का प्रथम दिवस है। संगोष्ठी की अध्यक्षता प्राचार्य डॉ. सत्यनारायण गर्ग ने की तथा संयोजक डॉ. अशोक गुप्ता ने किया।

कोटा में राजकीय कला महाविद्यालय एवं राजकीय महाविद्यालय के संयुक्त तत्त्वावधान में वर्ष प्रतिपदा को नवचेतना दिवस के रूप में मनाया गया। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि डॉ. मोहन लाल साहू ने कहा कि वर्ष प्रतिपदा मात्र समय में परिवर्तन की सूचना भर ही नहीं है वरन् जीवन में समग्र चेतना को जगाने की तिथि है। विषय प्रवर्तन डॉ. विजय पंचोली ने किया। कार्यक्रम का संचालन आदित्य गुप्ता ने तथा धन्यवाद ज्ञापन डॉ. जेड.ए. खान ने किया।

राजकीय महाविद्यालय केकड़ी में संगठन द्वारा आमंत्रित संगोष्ठी के मुख्य वक्ता प्रो. अनिल गुप्ता ने भारतीय कालगणना के महत्त्व को रेखांकित करते हुए आत्म गौरव अनुभव करने का आह्वान किया। कार्यक्रम की अध्यक्षता प्राचार्य डॉ. ओ.पी. माहेश्वरी ने की। संचालन इकाई सचिव पवन चंचल ने तथा आभार प्रदर्शन डॉ. विश्वामित्र वैष्णव ने किया।

राजकीय महाविद्यालय टोंक में संगठन के कार्यकर्ताओं द्वारा लगभग 1700 विद्यार्थियों एवं संकाय सदस्यों को तिलक लगा एवं मुँह मीठा कर नववर्ष की शुभकामनाएँ दीं। इस अवसर पर डॉ. आर.एस. मीना, डॉ. रेणु वर्मा, डॉ. सुषमा पाण्डेय, डॉ. राधेश्याम जगरवाल, प्राचार्य प्रो. रामपाल बेनीवाल, उपाचार्य डॉ. बी.आर. मीना सहित अनेक शिक्षक उपस्थित थे।

राजकीय महाविद्यालय अजमेर इकाई द्वारा क्लॉक टॉवर चौराहे पर समाज के बंधुओं को तिलक, प्रसाद के साथ नववर्ष की शुभकामनाएँ दी गईं। डूंगर महाविद्यालय बीकानेर में संगठन अध्यक्ष डॉ. दिग्विजय सिंह के नेतृत्व में शिक्षकों एवं विद्यार्थियों के साथ भारतीय नववर्ष मनाया गया।

राजकीय महाविद्यालय, सिरोही इकाईद्वारा आयोजित नववर्ष समारोह में मुख्य वक्ता नववर्ष आयोजन समिति सिरोही के अध्यक्ष श्री रमेश कोठारी रहे। समारोह की अध्यक्षता सेवानिवृत्त आई.जी. श्री पी.एल. दीपक ने की। इस अवसर पर डॉ. संजय पुरोहित, डॉ. कुसुम राठौड़, डॉ. गायत्री प्रसाद, कैलाश जोशी, डॉ. रामनारायण शास्त्री आदि का सक्रिय सहभाग रहा। राजकीय महाविद्यालय करौली में विभाग सचिव डॉ. विजेन्द्र शर्मा के नेतृत्व में शिक्षकों एवं छात्रों को नववर्ष की शुभकामनाएँ दी गईं। एम.एस.जे. महाविद्यालय भरतपुर इकाई द्वारा नववर्ष का स्वागत परम्परागत रूप से किया गया। कार्यक्रम में डॉ. सतीश त्रिगुणायत, डॉ. जग्गोसिंह, डॉ. आलोक श्रीवास्तव, डॉ. योगेन्द्र भानु, डॉ. मनोज सिनसिनवार आदि कार्यकर्ताओं का सहभाग रहा।

राजकीय महाविद्यालय, धौलपुर में इकाई द्वारा नवसंवतसर का स्वागत सरस्वती पूजा व तुलसी-मिश्री के प्रसाद ☛

जनप्रतिनिधियों से शिक्षक सम्मान की अपील

19 मार्च 2017 को दिल्ली अध्यापक परिषद के प्रदेश अध्यक्ष जय भगवान गोयल की अध्यक्षता में प्रदेश कार्यकारिणी की बैठक में पिछले कुछ दिनों से चर्चा में चल रहे अध्यापिका से दुर्व्यवहार/अपमान के संदर्भ में एक प्रस्ताव पारित किया गया कि जब तक शिक्षकों का सम्मान नहीं होगा तब तक स्वस्थ एवं समृद्ध समाज की कल्पना करना भी व्यर्थ है।

जनप्रतिनिधियों द्वारा या उनके द्वारा नियुक्त व्यक्ति/संस्था द्वारा प्रत्यक्ष/अप्रत्यक्ष रूप से शिक्षकों को अनेक बार अपमानित होना पड़ता है, छोटी-छोटी बातों पर बच्चों के सामने सस्पेंड और टर्मिनेट करने जैसी घटनाएँ, उन्हें ऊँची आवाज में बोल कर अपमानित करना, वीडियोग्राफी कर प्रचारित करना, शिक्षकों की कमियों का प्रचार करना, अभिभावकों के सामने शिक्षकों को नकारा साबित करना आदि अनेक घटनाओं से छात्रों, अभिभावकों और समाज में शिक्षकों के सामाजिक स्तर एवं उनके सम्मान को कम करने का प्रयास किया जा रहा है।

यहाँ तक कि कई बार छात्रों के सामने ही गलत भाषा का प्रयोग कर दिया जाता है इसका सीधा असर बच्चों के भविष्य पर पड़ता है और बच्चे निरंकुश होकर शिक्षक का अपमान भी करते हैं तथा अपशब्दों का प्रयोग करते हुए बदसलूकी भी कर बैठते हैं इससे समाज का वातावरण दूषित होता है। ऐसी घटनाओं के कारण हम कुछ शिक्षक/शिक्षिकाओं को खो चुके हैं।

इस तरह के प्रकरणों से शिक्षक समाज व्यथित, आहत तथा हतोत्साहित होता जा रहा है। अतः इस संबंध में दिल्ली अध्यापक परिषद् का मत है कि जिस शिक्षक से देश और समाज के उत्थान और निर्माण की बड़ी-बड़ी आशाएँ रखी जाती हैं जनप्रतिनिधियों का यह दायित्व होता है कि अपने आचरण और व्यवहार के द्वारा प्रत्येक मंच से इसके सम्मान और गौरव को बढ़ाने का पूरा ध्यान रखें। जिससे शिक्षक निर्भय होकर, सम्मानपूर्वक, अपनी योग्यता एवं अनुभव का सदुपयोग समाज हित में कर सके।

कार्यकारिणी की बैठक में प्रदेश महामंत्री रतनलाल शर्मा, प्रदेश संगठन मंत्री राजेंद्र गोयल, वरिष्ठ उपाध्यक्ष राजेन्द्र सिंह धामा, राजेंद्र स्वामी अतिरिक्त महामंत्री रूपराम सहरावत, महेश शर्मा, प्रदेश महिला मंत्री डॉ. सुदेश शर्मा, महिला उपाध्यक्ष सरोज शर्मा, राजकीय निकाय के अध्यक्ष वेद प्रकाश शर्मा, मंत्री ज्ञानेंद्र सिंह मावी, निगम निकाय अध्यक्ष सुभाष बघेल, मंत्री दीपक गोस्वामी, संगठन मंत्री पुष्पेंद्र सिंह, नई दिल्ली नगरपालिका निकाय अध्यक्ष राजेंद्र सिंह, मंत्री शिवेंद्र, सहायता प्राप्त निकाय अध्यक्ष नरेश शर्मा, मंत्री डॉ. शरद कुमार आदि उपस्थित थे।

☛ वितरण द्वारा किया। इस अवसर पर डॉ. गिर्राज मीणा, डॉ. शमा सक्सेना, डॉ. विजय लक्ष्मी शर्मा, डॉ. हरिओम शर्मा, डॉ. एस.के. सिंह आदि उपस्थित थे।

राजकीय महाविद्यालय बूंदी में संगठन के कार्यकर्ताओं द्वारा नववर्ष के अवसर पर शिक्षकों एवं शिक्षार्थियों को तिलक लगाकर एवं किशमिश-मिश्री से मुँह मीठा कराया गया। संगठन इकाई एवं नववर्ष का आयोजन समिति के संयुक्त तत्वावधान में इस अवसर पर कवि सम्मेलन का आयोजन भी किया गा।

राजकीय कला महाविद्यालय, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजकीय महिला महाविद्यालय दौसा इकाइयों द्वारा संयुक्त रूप से नववर्ष अभिनन्दन कार्यक्रम आयोजित किया गया। कार्यक्रम के मुख्य वक्ता अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के महामंत्री प्रो. जे.पी. सिंघल ने हमारा नववर्ष पूर्णतया खगोलीय गणना पर आधारित है तथा व्यक्ति-पंथ निरपेक्ष है। इस अवसर पर डॉ. ओ.पी. गुप्ता, डॉ. प्रेम सिंह, डॉ. लालचन्द जैन, डॉ. शिवशरण कौशिक, डॉ. सी.पी. महेन्द्रा, डॉ. राकेश शर्मा, डॉ. सतीश सिंघल उपस्थित रहे।

राजकीय महाविद्यालय, सरदार शहर में संगठन इकाई द्वारा सरस्वती माँ का पूजन अर्चन किया गया तथा मुख्य द्वार पर रंगोली सजाई गई। इस अवसर पर आयोजित परिचर्चा में डॉ. चेतनदास स्वामी ने बताया कि सृष्टि-सृजन का यह पर्व हमारे सांस्कृतिक मूल्यों की संस्थापना करता है। कार्यक्रम में डॉ. देवीशरण शर्मा एवं डॉ. कविता शर्मा ने भी विचार प्रकट किए।

राजकीय महाविद्यालय झालावाड़ में प्राचार्य डॉ. आर.एम. कुरेशी द्वारा माँ सरस्वती के पूजन से नवसंवत्सर कार्यक्रम का प्रारम्भ हुआ। प्रो. जी.के. मालवीय, डॉ. वी.सी. मीणा, डॉ. रामकल्याण मीणा आदि के सहभाग से सभी को नववर्ष की शुभेच्छाएँ दी गईं।

इस प्रकार डूंगरपुर, जोधपुर, एमएलसी भीलवाड़ा, कालाडेरा, डीग, सवाई माधोपुर, कन्या श्रीगंगानगर, भोपालगढ़, जे.डी.वी. कोटा, मीरा उदयपुर, चिमनपुरा, कन्या महाविद्यालय चौमू, आयुक्तालय कॉलेज शिक्षा, विधि अजमेर, चित्तौड़, नसीराबाद, किशनगढ़, सांभरलेक, कन्या महाविद्यालय अजमेर, कन्या महाविद्यालय कोटपूतली, कन्या शाहपुरा, ब्यावर सहित 98 इकाइयों द्वारा समारोहपूर्वक हर्षोल्लास से नववर्ष का स्वागत किया गया।